विमर्श

विकास संवाद का त्रैमासिक पत्र

साथी,

देश प्रदेश और समाज में अलग अलग स्तरों पर हम सब एक रचनात्मक भूमिका निभाने की कोशिश कर रहें हैं। ये प्रयास अलग अलग वर्गों और परिभाषाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह संभव है कि हम सबके विचार और नजरिये देश, काल एवं परिस्थितियों के अनुरूप भिन्न–भिन्न हों। ऐसी स्थिति में हमें लगता है कि एक बड़ी जरूरत उन सभी विचारों को एक जगह समेकित रूप में प्रस्तुत करने की है। आपसी चर्चाओं, कार्यशालाओं और घूमते–घामते तो हम एक–दूसरे को कहानियां, या कहें कि अनुभव भी सुनाते ही रहते हैं पर हम यह संभावना खोज रहे हैं कि क्या उन तमाम कहानियों और अनुभवों का दस्तावेजीकरण किया जा सकता है, ताकि एक बड़े दायरे में उनका विस्तार किया जा सके, फैलाया जा सके। इसी कोशिश के मद्देनजर 'विमर्श' नाम का यह दस्तावेज आपके सामने है। जरूरी नहीं है कि इस दस्तावेज को सराहा जाये, पर जरूरी है कि इसे पढ़ा जाये।

विमर्श में हमने बच्चों के अधिकार, वन अधिकार, भोजन का अधिकार, पंचायतों में महिलाएं और विस्थापन के सवालों के साथ–साथ कुछ जरूरी सूचनायें संकलित की हैं। मकसद साफ है– मुद्दों, विषयों और विचारों में बंटे हुये संघर्ष को एक नजर भर देखना। जब यह दस्तावेज आपके हाथ में आयेगा तब तक अधिकार और अधिकारिता से संबंधित दो बड़े बदलाव जमीन पर उतर चुके होंगे। अब देश के सभी जिलों में रोजगार गारंटी योजना लागू हो गई है या कहें कि पहुंच गई है, दूसरी बात यह है कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली अब जनतांत्रिक राजनीति का मुद्दा बन रही है, जिसका परिणाम है कि केंद्र सरकार की तमाम कोशिशों के बावजूद राज्य सरकारों ने खाद्य सबसिडी में अब अपना योगदान बड़े पैमाने पर बढ़ाना शुरू कर दिया है। पिछले साल छत्तीसगढ़ सरकार ने इस योजना का विस्तार करते हुए हर गरीब परिवार को तीन रुपये प्रति किलो चावल देने की घोषणा की तो अब मध्यप्रदेश सरकार साढ़े चार रुपये प्रति किलो चावल देने की कोशिश कर रही है। बहरहाल सवाल अब भी जिन्दा है कि क्या यह वायदा क्रियान्वित होगा या विधानसभा चुनावों के बाद गरीब परिवारों को यह वाक्य सुनने मिलेगा– *राशन नहीं है!*
अब जरूरी है कि हमारी और आपकी नजर लोक अधिकारों की जमीनी स्थिति को देख पायें। हम आपसे अनुरोध करते हैं कि आप जो भी मुद्दा, विषय या विचार महत्वपूर्ण समझते हैं, उसे लिखें और हमें भेजें, ताकि विमर्श की प्रक्रिया आगे बढ़ाई जा सके और जो बदलाव हो रहे हैं उन्हें और रचनात्मक बनाया जा सके।

✍ विकास संवाद विमर्श समूह की ओर से

विकास संवाद

ई–7/226, प्रथम तल, धनवंतरी कॉम्पलेक्स के सामने, शाहपुरा, अरेरा कॉलोनी, भोपाल, मध्यप्रदेश
फोन : 0755–4252789, ई मेल : vikassamvad@gmail.com, Web: www.mediaforrights.org

इस अंक में ....

बाल अधिकार

☼अधिकारों की छांव तले झुलसता बचपन	– प्रशान्त कुमार दुबे	– 3
☼मध्याान्ह भोजन योजना में छुआछूत	– रामप्रसाद मोथलिया	– 4
☼मध्याान्ह भोजन योजना में जारी है बंदरबाट	– प्रतीक	– 5
☼मध्यप्रदेश में बाल श्रमिकों की स्थिति	– विकास संवाद समूह	– 6
☼किशोरियों को नहीं मिलता है उनके हिस्से का पोषणाहार	– भो.अधि.समूह	– 7
☼मझगवां में कुपोषित बच्चों की मौत तय	– प्रवीण पाठक	– 8

वन अधिकार

☼अन्याय से मुक्ति की राह	– राजु कुमार	– 9
☼कानून के बाद भी आदिवासियों पर कहर	– राजु कुमार	– 10
☼वन कानून के बाद भी विस्थापन का खतरा	– प्रतीक/आनंद	– 11

भोजन एवं काम का अधिकार

☼मध्यप्रदेश में अपने उद्देश्यों से भटकती रो.गा.यो.	– भो.अधि.समूह	– 12
☼राष्ट्रीय मानव का जॉब कार्ड फाड़ा	– विवेक पवार	– 13
☼कहीं नहीं खुलती है महीने भर राशन दुकान	– भो.अधि.समूह	– 15
☼पीडीएस के संबंध में उच्चतम न्यायालय का आदेश	– भो.अधि.समूह	– 17
☼मध्यप्रदेश में गरीबों को सस्ता अनाज	– भो.अधि.समूह	– 17
☼अपराध सरकारों के – माफी किसानों को	– सचिन जैन	– 18
☼किसानों के कर्ज से संबंधित आंकड़े	– विकास संवाद	– 20
☼कहीं गड्ढे तक ही सीमित न हो जायें कपिलधारा के कुएं	– ध्रुव भाई	– 23

विस्थापन

☼विस्थापन और बच्चे	– रोली शिवहरे	– 23
☼एक नजर मेरे भी घर	– जयभीम	– 23

पंचायती राज और महिला

☼पंचायतीराज व्यवस्था ने दी महिलाओं को जुबान	– लोकेन्द्र सिंह कोट	– 25
☼इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना	– भो.अधि.समूह	– 25

कानूनी पक्ष

☼वन कानून 2006 – सार संक्षेप	– विकास संवाद समूह	– 28

1. बाल अधिकार

अधिकारों की छांव तले झुलसता 'बचपन'

यह सही है कि बच्चों को अल्पायु में मजदूरी नहीं करना चाहिये, परन्तु गरीबी व अन्य पूरक स्थितियों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। बाल मजदूरों को नक्शे से हटाना तो एक सरल काम है लेकिन इन बच्चों का उचित पुर्नवास एक अनुत्तरित सवाल है, जो कि सुरसा के मुख की भाँति मुँह बाये खड़ा है। यदि सरकार सख्ती कर बच्चों से पन्नी बीनना छुड़वाती है तो सांझ ढले उनके पेट में कूदने वाले चूहों का इंतजाम भी सरकार को पहले सोचना होगा। वर्तमान में प्रहलाद रूपी बच्चे, अधिकार रूपी होलिका की गोद में बैठे हैं और कथा कुछ इस तरह से बन रही है कि होलिका तो दहक ही रही है, प्रहलाद भी झुलस रहा है। यदि प्रहलाद को बचाना है तो फिर कुछ और नये प्रयास करने होंगे, नहीं तो वह दिन दूर नहीं जबकि इतिहास उलटेगा और अधिकारों की गोद में बैठा बच्चा धू–धू कर जलेगा और तब हमारे पास भी मूकदर्शक बने रहने के सिवाय कोई चारा नहीं होगा।

'बचपन' शब्द की अनूभूति एक स्फूर्तिदायक अहसास है। एक ऐसा समय जबकि स्वार्थ व तृष्णा से परे मौज व मस्ती की स्वरलहरियाँ हर क्षण, हर पल गुंजायमान रहती हैं। यह लहर, यह उन्माद क्या है इसके विषय में हम जानते तो बहुत कुछ हैं परन्तु उन्हें बयाँ नहीं कर सकते हैं । बचपन एक ऐसी अवस्था है जिसके पीछे तो बहुत कुछ नहीं छूटा होता है परन्तु आगे असीम संभावनाओं का आकाश बाँह पसारे प्रतीक्षारत होता है। गुड्डे–गुड़ियों का खेल, माँ का प्यार–दुलार, चिन्तामुक्त जीवन बस यही तो है 'बचपन'। **विलियम कॉपर का कहना है कि हमारे जीवन के सबसे महत्वपूर्ण वर्ष वे हैं जो हमने अपने बाल्यकाल में बिताये हैं।** कॉपर की ये दृष्टि उन दोनों स्थितियों को सम्यक रखती है जो कि विद्यमान हैं यानि गुड्डे–गुड़ियों का खेल और चिन्तामुक्त जीवन तो महज़ एक पहलू है जबकि दूसरा पहलू ऐसी तस्वीर हमारे समक्ष लाता है जो कि भारत में बालअधिकार संरक्षण के प्रयासों की जमीन को हरी भरी होने से रोकता है। यानि झुनझुने पकड़ने की उम्र में ही यदि बच्चों के हाथ में पन्नी बीनने की थैली, किसी गैराज के पाने हों या अपने ही घर में छोटे भाई बहनों को सम्हालने की मजबूरी हो तो फिर यह मजबूरी बड़े ही सहज भाव में इन बच्चों से इनका बचपन छीन ले जाती है। और तब इन अर्थों में पुनः कॉपर का कथन अपनी उपस्थिति दर्ज कराता है और यहाँ बचपन शब्द की अनुभूति स्फूर्तिदायक अहसास नहीं देती है बल्कि बचपन की खुशियों को काफूर बना देती है।
जब हम सब यह जानते हैं कि बच्चे किसी भी परिवार,समाज और देश के भविष्य के आधार होते हैं तब बच्चों की वर्तमान तस्वीर पर इसलिये भी प्रकाश ड़ालना आवश्यक है कि इससे देश का परिदृश्य झलकता है तथा तस्वीर की चमक बच्चों की स्थिति से उजली या मद्धिम हो सकती है। यह राष्ट्रीय स्तर पर बहस का विषय है कि बालअधिकार संरक्षण यानि महज़ 'संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार समझौते' पर अपना अनुमोदन और उसके परिपालन में प्रतिवर्ष अपना प्रतिवेदन जारी करना या फिर समझौते की शर्तों को वास्तविक रूप से लागू करवाना और उनका निरंतर अनुश्रवण सुनिश्चित करना। यह स्थिति अधिकारों के साये में बचपन के झुलसने की तरह ही है।

यह हर बच्चे का मौलिक अधिकार है कि वह उचित रूप से अपना मानसिक,सामाजिक एवं शारीरिक विकास कर सकें। बच्चों से संबंधित सभी राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय संधियों एवं कानूनों का निचोड़ भी यही है लेकिन इसके बावजूद दुनिया भर के 96 प्रतिशत बच्चे इस अधिकार से वंचित क्यों हैं ? बाल मजदूरी पर तो 1930 से प्रतिबंध है परन्तु आज भी यह समस्या कई यमजों/गुणकों में विद्यमान है। आज विश्व के लगभग 30 करोड़ बच्चे श्रमिकों के रूप में खटने को मजबूर हैं । इसके अलावा विश्व के कुल बाल श्रमिकों में से 50 प्रतिशत् से अधिक भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल व श्रीलंका जैसे विकासशील देशों में है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की रिपोर्ट को ही मानें तो अकेले भारत में ही 5 से 10 करोड़ के बीच बालश्रमिक हैं। इन बालश्रमिकों में बालिकाओं की स्थिति बद से भी बदतर है। विश्व के सभी विकसित, अविकसित तथा विकासशील देशों में किये गये सर्वेक्षण के आधार पर यह बात स्थापित होती है कि गरीबी, जनसंख्या और अशिक्षा बच्चों को मजदूरी करने के लिये विवश करती हैं। यह सही है कि बच्चों को अल्पायु में मजदूरी

नहीं करना चाहिये परन्तु गरीबी व अन्य पूरक स्थितियों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। भारत के संदर्भ में यह संविधान के अनुच्छेद 39 का स्पष्टतया उल्लंघन है जिसमें यह कहा गया है कि राज्य यह सुनिश्चित करे कि बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरूपयोग ना हो और आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर उन्हें ऐसे रोजगारों में ना जाना पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल ना हो।

बालअधिकारों के हनन का यह एक चरित्र है । एक अध्ययन के मुताबिक दिल्ली जैसे महानगरों में प्रतिदिन 5–7 बच्चे सड़कों पर आ रहे है। पूरे देश में तो यह आँकड़ा सालाना 15 से 20,000 की संख्या को पार करता है। परिवार बच्चों के लिये ढ़ाल का काम करते हैं बच्चे जितना परिवार से दूर रहेंगे उनके हिंसा, गरीबी, शोषण के शिकार होने की आशंका उतनी ही प्रबल होगी। बालकों के लिये बने कानूनों, संयुक्त राष्ट्र के घोषणापत्रों के मुताबिक ये सब बच्चे शालाओं में होने चाहिये परंतु वास्तव में ऐसा नहीं है। भारत के संविधान के अनुसार 86 वाँ संविधान संशोधन कहता है कि छः से चौदह आयु वर्ग के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रबंध करना सरकार का दायित्व है। शिक्षा का अधिकार, मूल अधिकार (अनुच्छेद 21–क) के रूप में घोषित भी कर दिया गया है और इस अधिकार की बानगी क्या कहिये कि देश में अभी भी तीन करोड़ बच्चे शिक्षा की पहुँच से दूर हैं और उनके घरों की शुद्ध आय का वे एक अनिवार्य हिस्सा हैं। अनुच्छेद 45 यह कहता है कि राज्य छः वर्ष तक के सभी बच्चों के पूर्व बाल्यकाल की देखरेख और उन्हें अनौपचारिक स्तर की शिक्षा देने का प्रयास करेगा परन्तु इस प्रयास की सबसे दुःखद परिणति यही है कि आज भी मध्यप्रदेश में लगभग हर दूसरा बच्चा कुपोषण का शिकार है। हर वर्ष कुपोषण या जनित बीमारियों से बच्चों की मौतों के मामले सामने आ रहे हैं।

प्रासंगिक यह भी है कि भारत ने अंर्तराष्ट्रीय संधि पर हस्ताक्षर कर,18 वर्ष तक की उम्र के बच्चों को बालक माना है लेकिन बाल मजदूरी अधिनियम (प्रतिबंध एवं निशेध अधिनियम, 1986) में 14 वर्ष की उम्र को आधार माना है और घातक उद्योगों में रत बच्चों को वह बालमजदूर कहती है। सवाल यह है कि इन दो परिभाषाओं के बीच झूलने वाले बच्चों की वास्तविक स्थिति क्या है और एक बच्चे के लिये काम करना ही घातक है तो फिर घातक और अघातक उद्योगों के मायने क्या हैं ? यदि विरोधाभासों की ही बात करें तो सरकार एक ओर तो कहती है कि मध्यप्रदेश में कुल जमा पौने गयारह लाख बालश्रमिक हैं लेकिन दूसरी ओर सरकार का ही सर्वशिक्षा अभियान चिल्ला–चिल्ला कर कहता है कि प्रदेश में आज भी लाखों बच्चे शिक्षा की दुनिया से बाहर है और वे बच्चे बालश्रमिक हैं। अर्थात् सरकार की परिभाषायें तो भिन्न–भिन्न हैं लेकिन पीठ पर बोझा लादे या गैराज के पाने पकड़े बच्चे के लिये परिभाषाओं की चकाचौंध कोई मायने नहीं रखती है, वह तो पहले भी बालमजदूर था और आज भी बालमजदूर हैं।

'राष्ट्र के बच्चे एक महत्वपूर्ण सम्पत्ति हैं उनकी देखभाल और चिंता करना हमारी जिम्मेदारी है। मानव संसाधन विकास के लिये हमारी राष्ट्रीय योजनाओं में बच्चों के कार्यक्रमों को प्रमुख स्थान मिलना चाहिये, ताकि हमारे बच्चे पुष्ट नागरिक बनें और शारीरिक रूप से सक्षम, मानसिक रूप से सजग तथा नैतिक रूप से स्वस्थ बनें।' ऐसा नहीं कि भारत की राष्ट्रीय बाल नीति में उर्द्धत किये गये इस जुमले को साकार रूप प्रदान करने के प्रयास नहीं किये गये हैं परन्तु इन प्रयासों का उचित अनुपालन ना हो पाना ही समस्या को यथावत बनाये रखने में मददगार है। अतएव बच्चों को राष्ट्रीय निधि के रूप में पल्लवित किये जा रहे प्रयासों को गति देने के लिये आवश्यक है कि इस संबंध में बनाये गये कानूनों,अधिनियमों तथा प्रावधानों

मध्यान्ह भोजन योजना में छुआछूत

देवास जिले के सोनकच्छ ब्लॉक के ग्राम सरसोदा के प्राथमिक विद्यालय में मध्यान्ह भोजन में दलित बच्चों के साथ छुआछूत का आलम अभी भी बरकरार है। यद्यपि मध्यान्ह भोजन योजनांर्तगत् दलितों को रसोईये के रूप में प्राथमिकता दी जानी थी, लेकिन दलितों की आर्थिक स्थिति खराब होने के कारण उनका कोई भी स्वयं सहायता समूह नहीं बन पाया था, जिससे उन्हें इस योजना का लाभ नहीं मिल पाया। परिणामस्वरूप इस गांव में गैर दलित जन भोजन पकाने का काम करते हैं।

जब गैर दलित रसोईया व सहायक स्कूल में मध्यान्ह भोजन कराते हैं तो दलित बच्चों को अलग पंक्ति में बिठाते हैं। खाना ऊपर से पटकते हैं, पानी भी ऊपर से डाल कर पिलाते हैं, भोजनोपरांत दलित बच्चों से अपने बर्तन भी साफ कराते हैं। इस घटना को लेकर शिक्षकों से कई बार बातचीत की गई, लेकिन वे भी दबंगों के चलते कोई भी कार्यवाही नहीं करते हैं। इस तरह दलित बच्चों के साथ बर्ताव किया जा रहा है और प्रशासन चुप्पी साधा है। यह व्यवहार योजना की सामाजिक समरसता की मूल मंशा पर भी सवालिया निशान लगाता है।

✍ *राम प्रसाद मोथलिया*
जन साहस, देवास

का विवेचन कर उनका अनुपालन सुनिश्चित किया जाये तथा अवहेलना और दुरूपयोग करने वालों के खिलाफ कड़ी कार्यवाही की जाये। इस कानून के अनुपालन में व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाने की भी आवश्यकता है उदाहरणार्थ बच्चों को काम से हटाने के पूर्व उनके विस्थापन और पुर्नवास की उचित व्यवस्था की जाये नहीं तो इसकी विपरीत दशा और भी घातक प्रभाव छोड़ देगी। वर्तमान में प्रहलाद रूपी बच्चे, अधिकार रूपी होलिका की गोद में बैठे हैं और कथा कुछ इस तरह से बन रही है कि होलिका तो दहक ही रही है, प्रहलाद भी झुलस रहा है परन्तु यदि प्रहलाद को बचाना है तो फिर कुछ और नये प्रयास करने होंगे नहीं तो वह दिन दूर नहीं जबकि इतिहास उलटेगा और अधिकारों की गोद में बैठा बच्चा धू–धू कर जलता रहेगा और तब हमारे पास भी मूकदर्शक बने रहने के सिवाय कोई चारा नहीं होगा।

सवाल यह भी है कि सरकार क्या बाल मजदूरी को खत्म करना चाहती है या फिर बाल मजदूरों को अदश्य करना चाहती है ? क्योंकि बालमजदूरों को नक्शे से हटाना तो एक सरल काम है लेकिन इन बच्चों का उचित पुर्नवास एक अनुत्तरित सवाल है, जो कि सुरसा के मुख की भाँति मुँहबाये खड़ा है। सरकार सख्ती कर बच्चों से पन्नी बीनना तो छुड़वा सकती है लेकिन सांझ ढ़ले उनके पेट में कूदने वाले चूहों का इंतजाम भी सरकार को पहले ही सोचना होगा ।

✍ प्रशान्त कुमार दुबे

मध्यान्ह भोजन योजना में जारी है बंदरबाट

मझगवां (सतना) ब्लॉक में स्वयं सहायता समूहों द्वारा स्कूलों में चलाये जा रहे मध्यान्ह भोजन के कार्य में जनपद पंचायत कार्यालय के कर्मियों व अधिकारियों द्वारा समूहों के साथ बड़े पैमाने पर वित्तीय अनियमितताओं संबंधी गुहार लगायी है।

ग्राम पंचायत बरहा में मां दुर्गावती महिला स्वयं सहायता समूह, महिलाओं का दो वर्ष पुराना समूह है। प्रशासन संबंधित कार्य की सूचना के आधार पर समूह की पदाधिकारी महिलाओं ने जनपद कार्यालय जाकर अधिकारियों से वार्ता कर अपनी ग्राम पंचायत की दो शिक्षा गारंटी शाला, एक प्राथमिक पाठशाला, एक जूनियर स्कूल सहित कुल चार विद्यालयों के मध्यान्ह भोजन का कार्य अपने जिम्मे लिया। इसके लिए उन्होंने जनपद पंचायत कार्यालय में आयोजित दो दिवसीय प्रशिक्षण, ग्राम पंचायत के साथ एग्रीमेंट संबंधित विद्यालयों के प्रभारी/प्रधानाध्यापकों से लिखित चार्ज आदि की प्रक्रिया पूरी की। माह जनवरी की 8 तारीख से यह समूह आज तक उक्त विद्यालयों में मध्यान्ह भोजन बनाने का कार्य कर रही है।

किंतु उपर्युक्त चार विद्यालयों में से दो विद्यालयों का माह जनवरी 08 का मध्यान्ह भोजन का पैसा जनपद पंचायत कार्यालय, मझगवां से मां दुर्गावती समूह को न देकर दूसरे समूह के खाते में भेज दिया गया है। इस घटना से दुर्गावती समूह की आदिवासी महिलायें बेहद परेशान हैं वह रोज जनपद पंचायत कार्यालय, सहायक जिला शिक्षा अधिकारी के कार्यालय जाती। समूह की अध्यक्षा श्रीमती कैरी का कहना है कि हम लोगों ने पूरी मेहनत व घर के वर्तन, पायल, करधनी आदि सामान गिरवी रख/बेंचकर लगातार विद्यालयों में अपना कार्य किया, अब अधिकारी लोग परेशान करते हैं।

समूह की आय आदिवासी सदस्य श्रीमती शांती समूह की कोषाध्यक्ष का कहना है कि गांव के बड़े लोगों ने मिलकर जनवरी 08 माह में मनीष व चंपावती दो स्वयं सहायता समूह बनायें हैं, जनपद पंचायत के बाबू त्रिपाठीजी को घूस देकर अपने समूह का नाम सूची में शामिल कर लिये हैं और पैसा हड़प करने की साजिश कर रहे हैं। दोनों महिलाओं ने इस बावत् मुख्य कार्यपालन अधिकारी, मझगवां व जिला कलेक्टर सतना से मुलाकात कर अपनी लिखित शिकायत दी है, परन्तु अभी तक इस पर कोई भी कार्यवाही नहीं की गई है।

✍ प्रतीक
आदिवासी अधिकार मंच, मझगवां (सतना)

मध्यप्रदेश में बाल श्रमिकों की स्थिति

मध्यप्रदेश में बाल श्रमिकों की संख्या को लेकर लगातार संशय की स्थिति रही है, गौरतलब यह भी है कि प्रदेश में बालश्रमिकों का 1997 के बाद से कोई भी सर्वेक्षण भी नहीं हुआ है । पहले बालश्रमिकों को दो श्रेणियों (खतरनाक व गैर खतरनाक) में देखा जाता रहा है किन्तु 10 अक्टोबर 2006 से प्रभावी बालश्रम अधिनियम 1986 के संशोधन ने हमारे समक्ष आ रही इस चूनौती को भी दूर कर दिया है और उसमें कहा गया है कि घरों/ढ़ाबों/होटलों में भी बच्चों का काम पर रखा जाना दंडनीय अपराध हो गया है। । यानि यह माना गया कि एक बच्चे के लिये काम करना ही सबसे खतरनाक है और फिर वह चाहे वह किसी भी स्थिति में क्यों न हो। प्रदेश में बाल श्रमिकों को लेकर अलग–अलग आंकड़े हमेशा से सामने आते रहे हैं, कभी सर्वशिक्षा अभियान का आंकड़ा तो कभी श्रम विभाग का आंकड़ा। लेकिन इन आंकड़ों के खेल में उलझकर बच्चे हर कहीं पिसते दिखाई पड़ते हैं।

वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार मध्यप्रदेश में 5–14 वर्ष तक के बालश्रमिकों की संख्या 10,65,259 थी, जबकि भारत में यह संख्या 1 करोड़ 26 लाख 66 हजार 377 थी। सर्वशिक्षा अभियान के अनुसार जुलाई माह में प्रदेश में कुल 71000 बच्चे ही स्कूल की परिधि से बाहर हैं, लेकिन वास्तविकता कुछ और ही है। वर्ष 2005–06 में यह आंकड़ा 472242 था, जो कि वर्ष 2006–07 में 296979 बचा और चालू वर्ष में 71000 हो गया। वास्तविकता यह नहीं हैं जो कि दिखाई जा रही है, परन्तु वास्तविकता वह है जो दिखाई नहीं जाती है। एक स्वयंसेवी संस्था द्वारा भोपाल की झुग्गी बस्तियों में स्कूल से बाहर बच्चों की संख्या जाने हेतु किये गये सर्वेक्षण से यह बात उभरती हैं कि अकेले भोपाल के झुग्गी क्षेत्रों में 23000 बच्चे शिक्षा की परिधि से बाहर हैं । और जब राजधानी में बच्चों की यह स्थिति है तो फिर मंड़ला, डिण्डौरी तथा झाबुआ जिलों के संदर्भ में बात करना बेमानी होगी और यह आंकडे स्वतः प्रदर्शित करते हैं कि प्रदेश में 71000 बच्चे बाहर हैं या फिर यह संख्या लाखों में होगी ? इसके अलावा भारत सरकार द्वारा प्रवर्तित राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजनाओं की स्थिति निम्न है । अब सवाल यही है कि वास्तव में बालश्रमिकों की संख्या कितनी है।

राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजनाओं की प्रगति (फरवरी, 2007 तक)

क्र.	जिले का नाम	स्वीकृति का वर्ष	सर्वेक्षित कामकाजी बच्चे	विशेष सेतु विद्यालय	अध्ययनरत कामकाजी बच्चे	मुख्यधारा विद्या. में नामांकित बच्चे	सुविधाएं
01	उज्जैन	2001	5485	40	2000	2751	1. छात्रवृत्ति– रु. 100 प्रतिमाह,
02	मन्दसौर	1988	3760	14	0816	1367	
03	रतलाम	2004	2150	20	1000	0947	
04	शाजापुर	2004	1254	08	0403	0033	2. मध्यान्ह भोजन– रु. 5 प्रतिदिन प्रति छात्र
05	ग्वालियर	2000	4072	40	1968	1699	
06	गुना	2004	1575	02	0100	–	
07	शिवपुरी	2004	2470	09	0329	–	3. निःशुल्क पाठ्यपुस्तकें तथा स्टेशनरी
08	छिन्दवाड़ा	2004	2175	40	1890	–	
09	खण्डवा	2004	1664	27	1350	–	
10	खरगोन	2003	1600	38	1900	–	4. निःशुल्क स्वास्थ्य परीक्षण
11	बड़वानी	2004	1150	23	1150	–	
12	धार	2004	2066	28	0982	–	
13	झाबुआ	2003	15039	10	0408	–	5. पूर्व–व्यावसायिक प्रशिक्षण
14	बैतुल	2004	5621	00	0000	–	
15	राजगढ़	2004	3362	18	0900	–	
16	रीवा	2004	3116	40	1928	80	
17	सीधी	2004	2453	40	1948	–	
	योग		**59012**	**397**	**19072**	**6877**	

संदर्भ :– मध्यप्रदेश श्रम विभाग की वेबसाईट, प्रस्तुति – विकास संवाद समूह

किशोरियों को नहीं मिलता है उनके हिस्से का पोषणाहार

अध्ययन के मुख्यांश

माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने स्पष्ट दिशानिर्देश देते हुये कहा है कि प्रत्येक दिन प्रत्येक किशोरी बालिका को उनके हिस्से का पोषणाहार दिया जाये। इस संदर्भ में जब 'भोजन का अधिकार अभियान' ने 5 जिलों के 6 ब्लॉक में सर्वेक्षण किया तो हमने पाया कि कहीं भी समस्त किशोरी बालिकाओं को उनके हिस्से का पोषणाहार नहीं मिलता है। यह एक ओर तो माननीय उच्चतम न्यायालय के आदेशों का स्पष्ट उल्लंघन है, दूसरी ओर यह किशोरी बालिका को पोषणाहार से वंचित रखने का मामला भी है। जरा सोचें कि यदि आज किशोरी बालिका को नहीं मिलेगा उसके हिस्से का पोषणाहार तो कल केसे होगा स्वस्थ भारत का निर्माण ?

सर्वेक्षण में हमने पाया कि

जिला –टीकमगढ (1 ब्लॉक)

टीकमगढ़ जिले के निवाडी ब्लॉक के 10 गांवों में से केवल 6 प्रतिशत किशोरी बालिकाओं को ही उनके हिस्से का पोषणाहार मिल पाता है।

जिला – छतरपुर (2 ब्लॉक)

ब्लॉक छतरपुर में केवल 4 प्रतिशत किशोरी बालिकाओं को ही उनके हिस्से का पोषणाहार मिल पाता है, जबकि **लौडी ब्लॉक** में केवल 8 प्रतिशत किशोरियां ही दर्ज हैं और उनमें से एक भी किशोरी बालिका को पोषणाहार नहीं मिल रहा है।

जिला – पन्ना (1 ब्लॉक)

पन्ना के पन्ना ब्लॉक में भी केवल 10 प्रतिशत किशोरियों को ही उनके हिस्से का पोषणाहार मिल पाता है।

जिला – भोपाल (1 ब्लॉक)

जिला भोपाल में भी भोपाल शहर में ही केवल 23 प्रतिशत किशोरियों को ही उनके हिस्से का पोषणाहार मिल पाता है। पांच आंगनवाडी केन्द्रों के अध्ययन से यह बात सामने आई ।

जिला – भिण्ड (1 ब्लॉक)

जिला भिण्ड के अटेर ब्लॉक में भी 8 प्रतिशत किशोरियों को ही उनके हिस्से का पोषणाहार मिल पाता है।

इस संबंध में और तर्क यह है कि

- एक और तो गांव/ आंगनवाड़ी केन्द्र की परिधि में आने वाली समस्त किशोरियों को दर्ज ही नहीं किया जाता है, ओर जहां दर्ज भी किया जाता है वहां केवल **दो/तीन** किशोरियों को ही पोषणाहार का वितरण किया जाता है। यह पोषणाहार भी दो लक्षित किशोरियों को केवल 6 माह ही वितरित किया जाता है ? उसके बाद कोई दूसरी किशोरियां चुन ली जाती हैं। ऐसे में सवाल यह है कि क्या छः माह पोषणाहार मिलने से किशोरी बालिका पोषित हो जायेगी, उसके बाद और उसके पहले क्या ?
- सरकारी मशीनरी में लाभ की परिभाषा यह है कि किशोरियों को दर्ज कर लिया जाये ओर उन्हें केवल स्वास्थ्य शिक्षा दी जाये (माफ करिये जो कभी दी नहीं जाती) और फिर कागजी कार्यवाही में यह घोषित किया जाये

कि प्रत्येक किशोरी बालिका लाभ पा रही है। जबकि मुख्य मुद्दा पोषणाहार के वितरण का है जिससे सरकार कन्नी काटती नजर आती है।

- माननीय उच्चतम न्यायालय को भी प्रदेश सरकार ने अपने पक्ष में कहा है कि प्रत्येक किशोरी बालिका लाभान्वित हो रही है, इसके मायने यह नहीं कि वह पोषणाहार पा रही है बल्कि वह दर्ज है और केवल स्वास्थ्य शिक्षा ले रही है।

- यह स्थिति तो उन जगहों की है, जहां कि आंगनवाड़ी केन्द्र है, लेकिन जहां आंगनवाड़ी केन्द्र नहीं हैं वहां पर बालिकाओं की स्थिति क्या होगी, यह समझ से परे है ! ज्ञात हो कि प्रदेश में इस समय लगभग 69 हजार आंगनवाडी केन्द्र हैं जबकि आवश्यकता 1,46,000 आंगनवाडी केन्द्रों की है ? इसके मायने अभी भी लाखों बालक–बालिकायें अभी भी अपने अधिकारों की परिधि से बाहर हैं।

- प्रत्येक आंगनवाडी केन्द्रों में पृथक–पृथक शौचालयों का होना आवश्यक है जिससे बालिकायें निर्बाध रूप से केन्द्रों तक पहुंच सकें, परन्तु 5 जिलों में हमने पाया कि बमुश्किल 2 प्रतिशत केन्दों में ही मात्र एक शौचालय है बाकी 98 प्रतिशत में तो एक भी शौचालय नहीं है। ऐसे में हम सोच सकते हैं कि बालिकायें किस गति से केन्द्रों की ओर आयेंगी ?

✍ भोजन का अधिकार अभियान सहयोगी समूह
मध्यप्रदेश

मझगवां में कुपोषित बच्चों की मौत तय

एन.एफ.एच.एस.–3 के अनुसार मध्यप्रदेश राज्य में हर दूसरा बच्चा कुपोषित है। इस सर्वे को झूठा कहकर सरकार ने अपने सभी जिलों व ब्लाकों में बालशक्ति परियोजना के संचालन की बात की, एवं यह तर्क दिया कि हम बाल संजीवनी अभियान के माध्यम से वर्ष मे दो बार बच्चों का पूरा परीक्षण कराते हुए पूर्ण स्वास्थ्य लाभ प्रदाय कर रहे हैं। इसके लिए कई विभागों को सम्मिलित करते हुए कार्ययोजनायें बनाई गई है। हमारे पास हर एक बच्चे की सही व पूर्ण जानकारी है। दूसरी तरफ मझगवॉ ब्लाक के 10 गॉवों के आंकड़ों को देखें तो पता चलता है कि इन ग्रामों मे कुपोषण का प्रतिशत प्रदेश के प्रतिशत से कहीं ज्यादा है। इसका कारण मात्र गरीबी ही नही है। इसका कारण कुपोषण को दूर करने व बच्चों की पूर्ण सुरक्षा का जिम्मा उठाने वाले विभाग भी हैं। इन अंचलों में कई आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं ने नाम न जाहिर करने की शर्त पर बताया कि हमें विभाग से हर केन्द्र में मात्र 2–3 बच्चों को ही अतिकुपोषित की श्रेणी मे ही रखने का आदेश है। इसलिए हम सर्वे के बाद अधिकतर बच्चों का नाम गंभीर कुपोषित की सूची से हटाकर साधारण कुपोषण की श्रेणी मे रख देते है।

दूसरी तरफ इसका कारण जानने पर पता चला कि बाल शक्ति परियोजना के तहत् चिन्हित अति कुपोषित बच्चों के लिए 14 दिवसीय चिकित्सीय कैंप मझगवॉ ब्लाक में मात्र कागजों मे संचालित किये जाते हैं। मगर बजट की उपयोगिता प्रतिवर्ष भेजी जाती है। ऊपरी अधिकारियों के असंवेदनशील व्यवहार के कारण अब ऑगनबाड़ी कार्यकर्ता भी इस बोझ से पीछा छुड़ाते हुए गांव मे ही रहना चाहती है। मगर ऐसी स्थिति में किसी ने नही सोचा कि उन गंभीर कुपोषित बच्चों का क्या होगा ? जिनके जीवन का जिम्मा इन असंवेदनशील कर्मचारियों व अधिकारियों के ऊपर छोड़ा गया है।

✍ प्रवीण पाठक
मजदूर एवं आदिवासी जनगठबंधन, सतना

2. वन अधिकार

वन अधिकार कानून : अन्याय से मुक्ति की राह

आदिवासियों एवं अन्य परम्परागत वनवासियों के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय से उन्हें मुक्ति दिलाने और जंगल पर उनके अधिकारों को मान्यता देने के लिए संसद ने दिसम्बर, 2006 में अनुसूचित जनजाति और अन्य परम्परागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) कानून पास कर दिया था और एक लम्बी अवधि के बाद अंततः केन्द्र सरकार ने इसे 1 जनवरी 2008 को नोटिफाई करके जम्मू कश्मीर को छोड़कर पूरे देश में लागू कर दिया। निश्चय ही सरकार की ओर से आदिवासियों एवं अन्य जंगलवासियों के लिए यह एक बेहतर तोहफा हैं। कानून के लागू हो जाने के बाद पूरे देश में जंगलवासियों को अधिकार देने के लिए प्रक्रिया शुरू कर दी गई है। इस सिलसिले में ग्राम सभाओं एवं अन्य माध्यमों से लोगों को इसके बारे में बताया जा रहा है। साथ ही विभिन्न जनसंगठनों ने भी अपने स्तर पर इस प्रक्रिया को पारदर्शी बनाने के लिए प्रयास तेज कर दिया है। कानून लागू होने से पहले इसके लिए बन रहे नियमों पर कई सवाल खड़े किए गए थे पर अब लागू होने के बाद यह जानना जरूरी है कि इस कानून से जंगलवासियों को क्या–क्या अधिकार मिल पाए हैं?

कानून के अनुसार 13 दिसंबर, 2005 से पूर्व वन भूमि पर काबिज अनुसूचित जनजाति के सभी समुदायों को वनों में रहने और आजीविका का अधिकार मिला है पर दूसरी ओर कानून की धारा 2 (ण) के अनुसार अन्य परम्परागत वन निवासी को अधिकार के लिए (उक्त अवधि से पहले वन क्षेत्र में काबिज़ रहे हो) तीन पीढ़ियों (एक पीढ़ी के लिए 25 साल) से वहाँ रहने का साक्ष्य प्रस्तुत करना होगा।

इसका साक्ष्य प्रस्तुत करना इन समुदायों के लिए मुश्किल भरा होगा। साथ ही यदि झाबुआ में भील अनुसूचित जनजाति है, तो उसे 13 दिसंबर, 2005 से पूर्व वन भूमि पर काबिज होने की दशा में वन भूमि पर अधिकार मिलेगा, पर यदि वही भील दूसरे जिले में हो, जहाँ पर वह अनुसूचित नहीं हैं, तो उसे अन्य परम्परागत वन निवासी के रूप में दावा पेश करना पड़ेगा। यानी एक ओर उसी समुदाय का व्यक्ति कानून से लाभान्वित होगा और दूसरी ओर उसे लाभ मिल पाने की सम्भावना कम होगी। कानून में धारा 2 (छ) में ग्राम सभा की दी गई परिभाषा के तहत पारा, टोला और अन्य परम्परागत ग्राम सभाओं को मान्यता दी गयी है। पर नियम की धारा 3 (1) में इसे स्पष्ट नहीं किया गया है, इसमें कहा गया है कि ग्राम पंचायत द्वारा ग्राम सभाओं का संयोजन किया जाएगा।

कानून की धारा 5 (1) में वन अधिकारों के धारकों के कर्तव्य बताए गए हैं, नियम की धारा 6 (1) में भी यही बात कही गई है पर कानून की धारा 3 (1) (झ) में धारकों को यह अधिकार दिए गए हैं कि उन्हें ऐसे किसी सामुदायिक वन संसाधन का संरक्षण, पुनरुजीवित या संरक्षित या प्रबंध करने का अधिकार है, जिसका वे सतत् उपयोग के लिए परम्परागत रूप से संरक्षा और संरक्षण कर रहे हैं। नियमों में ठेकेदार, व्यापारी एवं भू–माफिया को जंगल अधिकारों से रोकने के लिए कोई प्रावधान नहीं रखा गया है।

आदिवासियों के लिए जाति प्रमाण–पत्र प्रस्तुत करने का प्रावधान है, तो अन्य जातियों के लिए ऐसे प्रावधान नहीं रखे गए हैं। नियमों के तहत वनों पर अधिकार के लिए वन अधिकार समिति द्वारा दावों का सत्यापन करने की प्रक्रिया अपनाई जाएगी। इसमें साक्ष्यों की प्रस्तुति के लिए जिस प्रक्रिया को अपनाने की बात की गई है, वह इतनी जटिल है कि उसके तहत कई जनजातीय समुदाय दावा करने से वंचित रह जाएँगे। अधिकाँश वनवासी जनजाति के लिए दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करना दुरुह कार्य होगा। उल्लेखनीय है कि वन भूमि पर काबिज़ों के बारे में किसी भी प्रदेश सरकार के पास अभी तक कोई विश्वसनीय आँकड़ा भी उपलब्ध नहीं है।

ऐसे में वन अधिकार समिति के पास जो दावे आएँगे, उनकी संख्या सामान्य तौर पर ज़्यादा दिखाई पड़ेगी, जिसे दस्तावेज़ों के अभाव में अंततः खारिज करने की कोशिश की जाएगी। अगस्त 2006 के वन विभाग के आँकड़ों को देखे, तो पता चलता है कि मध्यप्रदेश की वनभूमि पर 24 अक्टूबर 1980 के पूर्व के अतिक्रमण के सम्बन्ध में आए विवादों के निराकरण के लिए जिला स्तर पर गठित समिति के प्रतिवेदन में अपात्र घोषित करने के पीछे बताए गए कारणों में सबसे प्रमुख कारण वन भूमि पर काबिजों द्वारा दस्तावेज़ी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर पाना है। इस पुराने मामले को देखकर ही यह आशंका होती है कि कितने वनवासियों के पास दस्तावेज़ी साक्ष्य होंगे और नहीं होने पर उनका क्या होगा ?

कानून में एक महत्वपूर्ण प्रावधान यह है कि धारा 3 (2) के तहत वनग्रामों के विकास के लिए यानी विद्यालय, अस्पताल, आँगनबाड़ी, राशन दुकान, पेयजल, सड़क, सामुदायिक केन्द्र आदि के लिए वन भूमि के परिवर्तन का उपबंध किया जाएगा, जिसके तहत प्रति हेक्टेयर 75 तक पेड़ों को गिराया जा सकता है। निश्चय ही इस प्रावधान से वन पर आश्रित समुदाय के विकास के लिए नए रास्ते खुलेंगे।

लगभग डेढ़–दो सौ सालों से यह कहा जा रहा है कि देश में जंगल और वन्य जीवों के ख़ात्मे के लिए जंगल में रहने वाले, खासतौर से आादिवासी समुदाय ज़िम्मेदार है। यही वजह है कि देश में अँग्रज़ों के समय से ही जंगल और वन्यजीवों को बचाने के उद्‌देश्य से जो कानून बनाए गए, उनमें जंगलवासियों के लिए कोई स्थान नहीं बचा। इसके बाद कभी जंगल और वन्य जीवों को बचाने के नाम पर, तो कभी विकास के नाम पर उन्हें जंगल से उजाड़ने का सिलसिला शुरू हो गया। लेकिन ऐतिहासिक रूप से जारी इस अन्याय को जंगलवासी लम्बे समय तक सहने को इच्छुक नहीं हुए और अपने अधिकारों के लिए गोलबंद होकर आवाज़ उठाने लगे। यह साफ दिखाई देने लगा कि जंगल और वन्य जीवों को जंगल पर परम्परागत रूप से आश्रित लोगों से खतरा नहीं है बल्कि वन माफियाओं से खतरा है। जंगलों का दोहन और वन्य पशुओं का शिकार सबसे ज़्यादा पिछली सदी में ही हुआ है, और इनके संरक्षण के लिए बनाए गए कानूनों का कोई लाभ भी दिखाई नहीं पड़ा। दूसरी ओर जंगलों से बेदखल होते समुदाय अपने जीवन और अस्मिता के संघर्ष से जूझते हुए अपने अधिकारों की मांग करते रहे। अंततः सरकार को भी इस बात का अहसास हुआ कि जंगल पर आश्रित समुदाय के साथ वास्तव में अन्याय हुआ है।

इस कानून के पारित हो जाने के बावजूद इसको लागू करने में कई अड़चने आई। लम्बे समय तक इसे ठंडे बस्ते में डाल कर रखा गया। इस बीच इसे लेकर कई संगठनों एवं वन्य जीव संरक्षकों ने विरोध जताया। उनका साफ कहना था कि कानून बन जाने से वन्य जीवों के अस्तित्व पर खतरा उत्पन्न हो जाएगा। लेकिन दूसरी ओर यह देखा गया है कि जबसे जंगल के आश्रितों को जंगल से खदेड़ा गया है, तबसे कई दुर्लभ जानवरों के अस्तित्व पर संकट गहराया है। इसके बावजूद जंगल के आश्रितों को ही दोषी माने जाने की परम्परा चलती रही है। आदिवासियों के हितों के लिए संघर्षरत संगठनों का कहना है कि जहाँ–जहाँ आदिवासी जंगलों में बसे हुए हैं, वहाँ–वहाँ जंगल बचे हुए हैं। उनका कहना है कि वन माफिया उन्हीं इलाकों में सक्रिय हैं, जहाँ से लोग विस्थापित हो गए हैं। जब अंतर साफ नजर आने लगा तो सरकार के लिए यह कहना कठिन हो गया कि वन आश्रितों के कारण वनों को नुकसान हो रहा है। वन आश्रितों की संस्कृति में पेड़–पौधे एवं वन्य जीव रचे–बसे हुए हैं, इसलिए उन्हें प्रकृतिप्रेमी और जंगल के वास्तविक अधिकारी माना जाना चाहिए।इस कानून से उन्हें अधिक से अधिक लाभ मिल पाए, इसके लिए न केवल सरकार को अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति दिखानी होगी बल्कि जनसंगठनों को भी महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी।

✍ **राजु कुमार**

कानून के बावजूद आदिवासियों पर कहर

कानून लागू होने के पहले महीने में ही वन विभाग ने मध्यप्रदेश के बुरहानपुर जिले के पीपलखोरा गांव में आदिवासियों के 100 घरों को जला दिया और जूनाबाड़ी के 12 घरों को तोड़ दिया। कानून की धारा 4(5)में साफ लिखा हुआ है कि जब तक अधिकारों का फैसला नहीं हो जाता, तब तक किसी को जंगल–जमीन से बेदखल नहीं किया जा सकता। स्थानीय स्तर कोई कार्रवाई नहीं होने से आक्रोशित 250 से ज्यादा आदिवासियों ने भोपाल आकर तीन दिन तक धरना भी दिया। धरने के अंतिम दिन आदिवासी एकता संगठन के गोपाल भाई के नेतृत्व में आदिवासियों ने वन मंत्री कुंवर विजय शाह के बंगले पर मंत्री से मुलाकात की। वहां उन्होंने अपने घरों को जलाये जाने की घटना का विरोध करते हुए दोषियों पर जल्द कार्रवाई की मांग की।

संगठन के गोपाल भाई ने बताया कि जलाने के अलावा वन विभाग के अधिकारियों ने इन आदिवासियों के घरों से 25 से 30 बोरा अनाज, 150 मुर्गियां, 60 बकरियां, गहने, बर्तन, कपड़े व अन्य सामान भी लूट लिया। इस कड़कड़ाती ठंड में भी ये परिवार खुले आसमान तले रहने को विवश हैं।

आदिवासी मुक्ति संगठन के विजय भाई का कहना है कि आदिवासियों एवं अन्य परंपरागत जंगल वासियों के लम्बे संघर्ष के बाद केन्द्र सरकार यह मानने पर मजबूर हुई कि आदिवासियों के साथ ऐतिहासिक अन्याय हुआ है और इसी अन्याय को सुधारने के लिए अनुसूचित जनजाति एवं अन्य परंपरागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) कानून को लागू किया गया। कानून के तहत जब तक जंगल में रहने वाले आदिवासियों एवं अन्य परंपरागत वन निवासियों के अधिकारों का उपरोक्त कानून के तहत सर्वे और सेटलमेन्ट नहीं हो जाता, तब तक किसी को भी उनके जमीन और निवास से विस्थापित नहीं किया जायेगा पर इसके बाद भी लोगों के घरों को जलाया जाना सरकार की असफलता का प्रतीक है। बुरहानपुर की यह घटना कानून लागू होने के बाद संभवतः देश की पहली घटना है, जिसमें आदिवासियों को बड़े पैमाने पर उजाड़ा गया है।

पीपलखोरा के ढेमसिंग ने बताया कि उनका गांव वन विभाग के बीट क्रमांक 120 और 121 में पड़ता है और उनके पास इस बात का साक्ष्य है कि वेलोग वहां 1978–1979 से रह रहे हैं पर वन विभाग इस बात को नहीं मानता। पीपलखोरा के ही ढेढू का कहना है कि वन विभाग के दावे पर क्यों विश्वास किया जा रहा है, जबकि कानून में दावे और सत्यापन की बात की गई है।

वन कानून के बाद भी विस्थापन का खतरा

मझगवां (सतना) के लगभग 500 हैक्टेयर के विशाल वन क्षेत्र को सरकार ने अब रिजर्व फारेस्ट घोषित कर दिया है। सरकार के इस कदम से क्षेत्र के लगभग दो सौ छोटे–बड़े गाँवों के हजारों परिवारों के सामने आजीविका का संकट आयेगा क्योंकि उक्त सभी गाँवों में रहने वाले अधिकांश लोग गरीब, आदिवासी, अनुसूचित समुदाय के हैं। अधिकतर परिवारों की आजीविका यहाँ की बॉक्साइड खदानों की मजदूरी, लघुवनोपज, जंगलों से मिलने वाले पशुओं के चारे व छोटी–छोटी कृषि जोतों (जंगल की भूमि) पर निर्भर है।

आजीविका के साथ–साथ उपर्युक्त गाँवों में लगभग एक तिहाई गाँव, मजरे वन ग्राम या गैर राजस्व गाँव हैं। भविष्य में इनके विस्थापन का भी प्रयास प्रशासन द्वारा किये जाने की पूरी सम्भावना है। ज्ञात हो कि प्रशासन द्वारा अगस्त 2007 में अचानक ही क्षेत्र की ग्राम पंचायतों को रिजर्व फारेस्ट के बावत् वन विभाग द्वारा नोटिसें भेजी गयी जिसमें 60 दिन के अन्दर आपत्तियाँ दायर करने का जिक्र था। अधिकतर गाँवों में यह सूचना ग्राम प्रधान व सचिवों की उदासीनता के चलते उन तक ही सीमित रही और निर्धारित वक्त बीत गया फिर अचानक मीडिया के जरिये समाचार पत्रों के माध्यम से क्षेत्रवासियों को इस बावत आगाह किया गया, लोगों को बड़ा आघात पहुँचा तथा स्थानीय लोगों ने सरकार के इस फैसले के विरूद्ध अपनी एकजुटता का प्रदर्शन कर विरोध प्रकट किया।

यदि हम यहाँ के लघुवनोपज व जंगल के विभिन्न उत्पादों पर गौर करें तो हम पातें हैं कि यहाँ बड़े पैमाने पर आँवला, व तेंदूपत्ता पाया जाता है इन दोनों उत्पादों से क्षेत्र के प्रत्येक परिवार को कम से कम एक माह की आजीविका मिल जाती है। बरहा, गुझवा, सेलहा, बदहा, छनेहरा, सिद्धा, देवरा, अमिरिती आदि लगभग दो दर्जन आदिवासी बाहुल्य गाँव ऐसे हैं जहाँ के अधिकतर परिवार भूमिहीन हैं और इन सबकी आजीविका का एक मात्र आधार यहाँ की बाक्साइड खदानों से मिलने वाली मजदूरी ही है। इसके अलावा महुआ, बेल, चिरौंजी, बेर, शहद, गोंद, सफेद मुसली, शतावर, अर्जुन, कामराज आदि सैकड़ों किस्म की वनस्पतियाँ व जड़ीबूटियों का संग्रह यहाँ के लोग अपने इस्तेमाल करने व बेचकर पेट पालने के लिए करते हैं। लोगों के सार्वजनिक निस्तार, मवेशी चराने आदि जीवन की प्रमुख जरूरतें भी जंगलों पर निर्भर हैं ऐसे में निश्चित ही बिना आमजनों को सूचित किये सरकार का यह एक तरफ फैसला यहाँ के हजारों परिवारों का बर्बाद करने का एक कुत्सित प्रयास है।

एक तरफ मध्यप्रदेश सरकार ने वनाधिकार अधिनियम–2006 को जनवरी 2008 से प्रदेश में क्रियान्वित कर वनाश्रित परिवारों को जमीनों पर मालिकाना हक देने की प्रक्रिया प्रारंभ की है वहीं दूसरी ओर सरकार का ही एक विभाग सुनियोजित तरीके से हजारों परिवारों के मौलिक अधिकारों का हनन कर उन्हें बर्बाद करने पर उतारू है।

✍ **आनंद/प्रतीक**
आदिवासी अधिकार मंच, मझगवां (सतना)

3. भोजन एवं काम का अधिकार

म.प्र. में अपने उद्‌देश्यों से भटकती रोजगार गारंटी योजना

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम में कई ऐसे पहलू हैं जिनके आधार पर इसे ''जनता का कानून'' कहा जा सकता है। सबसे पहली बात तो यही है कि इस अधिनियम की रूपरेखा तैयार करते हुये तमाम मुद्दों पर बहुत सारे जनसंगठनों के साथ परामर्श की एक लम्बी प्रक्रिया चलाई गई। दूसरी बात, यह एक ऐसा कानून है जिसके माध्यम से कामकाजी लोगों की जरूरतों को संबोधित करने और प्रतिष्ठापूर्ण जीवन के उनके मूलभूत अधिकार को साकार करने की कोशिश की जा रही है। तीसरे, यह कानून ग्रामसभाओं, सामाजिक ऑडिट, सहभागी नियोजन और अन्य माध्यमों से आम लोगों को भी रोजगार गारण्टी योजनाओं के क्रियान्वयन में सक्रिय भूमिका अदा करने का मौका देता है। बाकी कानूनों से तुलना की जाये तो एनआरईजीए सचमुच ही जनता द्वारा, जनता के लिये और जनता का कानून है। रोजगार गारंटी कानून लोगों को केवल रोजगार ही उपलब्ध नहीं करा पायेगा बल्कि विकास की प्रक्रिया को भी जनोन्मुखी बनायेगा।

हमारे राज्य में इस कानून के क्रियान्वयन पर बड़ी ही शिद्दत, बड़ी ही ऊर्जा और प्रतिबद्धता के साथ काम शुरू हुआ। सरकार ने व्यवस्थागत पहलुओं पर खूब मेहनत की और हर सरकारी वक्तव्य से यह भावना झलकी कि हर हाथ को काम मिलेगा, काम का पूरा दाम मिलेगा और समाज के ढांचे में विकास के नये पहलू – नये आयाम जुड़ेंगे। सरकार की कोशिशों को हम नजर अंदाज नहीं करते हैं पर गांवों में काम करते हुये तमाम स्वैच्छिक संस्थाओं और जन संगठनों ने लगभग 23 महीनों (2 फरवरी 2006 से 29 दिसम्बर 2007 तक) के अनुभवों के आधार पर यह पाया कि इस कानून की भावना और क्रियान्वयन की व्यवस्था में तालमेल नजर नहीं आ रहा है। परिणाम स्वरूप लगभग दो हजार करोड़ रुपये खर्च होने के बावजूद न तो लोगों की रोजगार सम्बन्धी जरूरत ही पूरी हो पा रही है, न ही ग्रामसभा को ताकतवर होने का अहसास हुआ और न ही विकास के ताने–बाने में मानवीयता का ही प्रवेश हो सका। लोग अब भी भूखे ही सो रहे हैं और अभाव के संकट का तापमान कम होता नजर नहीं आ रहा है।

ऐसे ही दौर में हम अखबारों और सरकार के प्रचारतंत्र के जरिये यह जानते रहे हैं कि मध्यप्रदेश रोजगार गारण्टी योजना के क्रियान्वयन के मामले में देश अव्वल है। प्रदेश ने गत वर्ष 26 लाख 41 हजार श्रमिकों को रोजगार दिया और 1966 करोड़ रुपये व्यय किये गये परन्तु जमीन पर मजदूर यही पूछते नजर आये कि हम इस संख्या में शामिल क्यों नहीं हैं? इस परिस्थिति में भोजन का अधिकार अभियान मध्यप्रदेश समर्थक समूह के साथ सम्बद्ध स्वैच्छिक संगठनों ने हकीकत की थाह लेने का निर्णय लिया। इस निर्णय के तीन पक्ष थे – पहला पक्ष लोगों की परिस्थिति का वर्तमान देखना, दूसरा पक्ष था उनके साथ रोजगार गारण्टी योजना, सार्वजनिक वितरण प्रणाली और आंगनवाड़ी की योजनाओं पर जानकारी आधारित चर्चा करना और तीसरा पक्ष था इन योजनाओं का त्वरित अध्ययन करके यह जानना कि योजनाओं के सबसे मूल प्रावधानों का आम लोगों और हितग्राहियों के जीवन में क्या स्थान है? दूसरे शब्दों में कहें तो इन योजनाओं को मानवाधिकारों के नजरिये से जांच–पड़ताल करके वास्तविकता को सामने लाना।

अध्ययन

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की जमीनी पड़ताल हेतु किया गया हमने यह अध्ययन 5 जिलों के 7 विकासखंड़ों के 72 गांवों में किया गया। अध्ययन के दौरान सामान्य जानकारियों के लिये समूह चर्चा की गई, जबकि विस्तृत व विश्लेषणात्मक अध्ययन के लिये सर्वेक्षण पद्धति को अपनाया गया। सर्वेक्षण पद्धति के लिये हमने 5 जिलों के 1374 मजदूरों का सर्वेक्षण किया। साथ ही यात्रा के दौरान कार्यकर्ता 7200 परिवारों के लोगों से मिले। प्रमुख अध्ययन निष्कर्ष इस प्रकार रहे।

जॉब कार्ड

अध्ययन से उभरा कि 72 गांवों के 16.75 प्रतिशत (3476 परिवार) परिवारों के पास आज भी जॉब कार्ड नही हैं। रोजगार गारंटी कानून के मुताबिक प्रत्येक ग्रामीण परिवार को पंजीयन के 30 दिन के भीतर जॉब कार्ड जारी कर दिया जायेगा, जबकि छतरपुर, सतना व टीकमगढ़ जिलों में जहां कि योजना लागू हुये 2 वर्ष होने जा रहे हैं, अभी तक शत–प्रतिशत लोगों के पास जॉब कार्ड नही है जबकि राज्य कहता है कि जनगणना 2001 के अंर्तगत् शामिल परिवारों से ज्यादा (131 प्रतिशत्) जॉब कार्ड बांटे गये हैं।

आवेदन

रोजगार गारंटी योजना का मूल मंत्र है कि आवेदन दो और काम लो। इस कानून के अंतर्गत एक सुस्पष्ट व्यवस्था रखी गई है कि लोगों द्वारा काम मांगने के 15 दिन के भीतर काम दिया जायेगा। निर्धारित समयावधि में काम नहीं दिये जाने पर मजदूरों को बेरोजगारी भत्ता दिया जायेगा। अध्ययन में हमने पाया कि 90 प्रतिशत गांवों में काम के लिये आवेदन नहीं दिया जाता है। यहां पर लोगों को बगैर आवेदन के ही काम दिया जाता है, जिससे न तो सभी लोगों को रोजगार मिलता है और न ही काम न मिलने पर बेरोजगारी भत्ते का अधिकार। जबकि राज्य सरकार कहती है कि हमने अभी तक हर काम मांगने वाले हाथ को काम उपलब्ध कराया है।

भ्रष्टाचार और फर्जी प्रविष्टि

अध्ययन में जॉब कार्डों में 45 प्रतिशत फर्जी प्रविष्टि पाई गई हैं, इसके मायने हैं *ना तो हर हाथ को काम है और न ही काम का पूरा दाम है*।

पंचवर्षीय विकास योजना और वार्षिक कार्ययोजना

98 प्रतिशत गांवों की न तो पंचवर्षीय विकास योजना और न ही वार्षिक कार्ययोजना सर्वसम्मति से ग्रामसभा द्वारा बनी है, 91 प्रतिशत लोग तो यह भी नहीं जानते कि विकास योजना होती क्या है? जबकि रोजगार गारंटी कानून के मुताबिक प्रत्येक गांव में पंचवर्षीय विकास योजना और वार्षिक कार्ययोजना के आधार पर ही कार्य किये जायेंगे।

राष्ट्रीय मानव का जॉब कार्ड फाड़ा

बैगा जनजाति मध्यप्रदेश की तीन आदिम जनजातियों में से एक है व इसे राष्ट्रीय मानव का दर्जा प्राप्त है। यह जनजाति प्रदेश के डिण्डोरी, मंडला, बालाघाट, शहडोल, अनुपपुर जिलों में पाई जाती है। यह जनजाति भी सतत भुखमरी का शिकार रही है और ऐसी स्थिति में रोजगार गारंटी योजना महत्वपूर्ण है, जिससे ग्रामीणों को कम से कम 100 दिन के रोजगार की गारंटी तो मिल रही है। परन्तु मंडला जिले के बिछिया ब्लॉक की कटंगा पंचायत के सुखमन सिंह बैग के लिये तो यह योजना किसी अभिशाप से कम नहीं है।
सुखमन ने रोजगार गारंटी योजना में दो दिन काम किया और सचिव ने उसका जॉब कार्ड अपने पास रख लिया। सुखमन के बार–बार मांगने पर भी जब जॉब कार्ड नहीं दिया गया तो एक बार सुखमन ने पंचायत में अपना जॉबकार्ड देखा। उसके जॉब कार्ड पर 25 दिन की मजूरी दर्ज थी। सुखमन ने विरोध किया कि मैने तो केवल 2 दिन ही काम किया था मैं इसकी शिकायत करूंगा। तब सचिव नूरसिंह पंद्रे ने सुखमन बैगा का जॉबकार्ड उसी के सामने फाड़ डाला और कहा कि जा कर ले शिकायत।

इसके बाद लगभग 6 माह तक सुखमन के पास जॉब कार्ड नहीं था, और वह अपने काम के अधिकार से वंचित था। स्थानीय जनसंगठन जनसंघर्ष मोर्चा की पहल के बाद उसे नया जॉब कार्ड मिला है लेकिन उस पर भी काम मांगने पर भी अब सुखमन को नहीं मिलता है।

3 लाख का घोटाला

जन संगठन ने *कटंगा* पंचायत में ही पदयात्रा निकालकर फर्जी बिल/ वाउचर फर्जी इंट्री, फर्जी काम आदि का मामला एसडीएम के समक्ष उठाया। तब जांच होने पर सरपंच पंजूलाल पुसाम दोषी पाया गया और पंचायत निरीक्षक ने 3 लाख रुपये की रिकवरी निकाली। लेकिन बाद में एसडीओ ने इस रिकवरी को कम कर 1 लाख 40 हजार 308 रुपये 61 पैसे की रिकवरी निकाली। धारा–40 का प्रकरण भी सरपंच पर चल रहा है, लेकिन एसडीएम ने रिश्वत ली है और जिसके कारण सरपंच व सचिव पर अभी तक कोई भी कार्यवाही नहीं की गई।

✍ विवेक पवार
जनसंघर्ष मोर्चा, मंडला

कार्यस्थल पर बोर्ड और निगरानी समिति

रोजगार गारंटी कानून में पारदर्शिता को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है और प्रत्येक कार्यस्थल पर बोर्ड तथा निगरानी समिति बनाये जाने का प्रावधान रखा गया है लेकिन अध्ययन में हमने पाया कि 100 प्रतिशत कार्यस्थलों पर न तो निगरानी समिति बनी है और न ही 77 प्रतिशत कार्यस्थलों पर बोर्ड ही लगा है।

सामाजिक अंकेक्षण

रोजगार गारंटी कानून में स्पष्ट प्रावधान है कि प्रत्येक 6 माह में ग्रामसभा द्वारा अनिवार्य रूप से सामाजिक अंकेक्षण किया जाना है, अध्ययन से हमने पाया कि 100 प्रतिशत गांवों में सामाजिक अंकेक्षण सहभागिता से नहीं हुआ है इसके अलावा सबसे गंभीर बात तो यह है कि 05 गांवों में सामाजिक अंकेक्षण सचिव व सरपंच के घर पर बैठकर किया गया बल्कि स्वयं राज्य शासन ने सामाजिक अंकेक्षण को ठेके पर देने हेतु विज्ञापन दिया है।

समय पर मजदूरी का भुगतान

रोजगार गारंटी कानून में यह प्रावधान है कि मजदूरों को कार्य करने के 7 से 15 दिवस के उपरांत मजदूरी का भुगतान अनिवार्य रूप से किया जाये। अध्ययन में हमने पाया कि 100 प्रतिशत मजदूरों को समय पर मजदूरी का भुगतान नहीं हुआ है और इस भुगतान की समय सीमा 1 से लेकर 6 माह तक की रही है।

वंचितों को काम

रोजगार गारंटी कानून में मध्यप्रदेश में वंचितों विशेषतः महिलाओं तथा विकलांगजनों को अनिवार्य रूप से काम दिये जाने का प्रावधान रखा गया है लेकिन अध्ययन में हमने पाया कि 86 प्रतिशत गांवों में विकलांगों तथा 50 प्रतिशत गांवों में महिलाओं को काम मांगने पर भी काम नहीं मिला।

प्रत्येक कार्यस्थल पर सुविधायें

रोजगार गारंटी योजना में प्रत्येक कार्यस्थल पर स्वच्छ पेयजल व्यवस्था, प्राथमिक उपचार किट तथा 6 वर्ष तक की उम्र के 5 बच्चों पर एक झूलेघर की तथा छायादार स्थल की व्यवस्था की जाना अनिवार्य है। अध्ययन से हमने पाया कि 59 प्रतिशत कार्यस्थलों पर स्वच्छ पेयजल उपलब्ध नहीं है, जबकि 100 प्रतिशत कार्यस्थलों पर प्राथमिक उपचार किट झूलाघर तथा छायादार स्थल की व्यवस्था नहीं है।

न्यूनतम मजदूरी

रोजगार गारंटी योजना में मजदूरों को प्रतिदिन न्यूनतम मजदूरी दिये जाने का प्रावधान है जबकि अध्ययन के 100 प्रतिशत मजदूर न्यूनतम मजदूरी को ही पर्याप्त नहीं मानते हैं।

✍ **भोजन का अधिकार अभियान सहयोगी समूह, मध्यप्रदेश**

नागरिक पत्रकारिता

- **दैनिक भास्कर** – फील्ड़ में काम करते समय कई बार हमारे समक्ष कई महत्वपूर्ण घटनायें आती है, लेकिन अक्सर वे घटनायें कभी जगह के कारण तो कभी समाचार–पत्रों तक न पहुंच पाने के कारण समाचार जगत का हिस्सा नहीं बन पाती हैं। इस तरह के समाचारों को समाचार–पत्रों में स्थान दिलाने का जिम्मा उठाया है, भास्कर समूह की नवीनतम पहल ने। भास्कर समूह ने नागरिक पत्रकारिता के नाम से जो अगुवाई की है, उसमें हम तीन तरह से जानकारी दे सकते हैं – अब हम टोल फ्री नंबर 18002331000 पर सुबह 11 से शाम 6 बजे तक जानकारी दे सकते हैं या फिर 54567 पर एसएमएस और ई मेल crb@bhaskarnet.com पर अपनी खबरें पहुंचा सकते हैं।

- **www.mynews.in एवं www.merikhabar.com**
  हमारे समक्ष एक महत्वपूर्ण विकल्प 'मेरी खबर' नाम से वेबसाईट भी है। इस पर भी आप अपनी खबरों को पहुंचा सकते हैं। अपनी खबर को आप www.merikhabar.com या अंग्रेजी में आप अपनी खबरों को www.mynews.com पर भेज सकते हैं। इसके संपादक श्री वेदव्रत गिरि 09826169126 से संपर्क भी कर सकते हैं।

कहीं नहीं खुलती है महीने भर राशन दुकान

सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर मध्यप्रदेश में किये गये अध्ययन की रिपोर्ट

मध्यप्रदेश में योजना आयोग के सर्वेक्षण के मुताबिक 37.43 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी की रेखा के नीचे रह रही है। भारत सरकार के अनुसार प्रदेश में गरीब परिवारों की संख्या 41.25 लाख है। इतने परिवार तो प्रत्यक्ष रूप से सार्वजनिक वितरण प्रणाली के हितग्राही तो हैं ही। साथ ही विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत भी रियायती राशन हितग्राहियों को दिया जाता है। प्रदेश में 1.25 लाख निराश्रित व्यक्तियों, 92428 छात्रावास के छात्रों और 15.81 लाख परिवार अन्त्योदय अन्न योजना के हितग्राही हैं। इसको जोड़ने पर पता चलता है कि मध्यप्रदेश में 59.234 लाख लगभग परिवारों के मान से भारत सरकार से लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत राशन आवंटित होना चाहिये। वर्तमान में 35 किलो राशन एक कार्ड पर हर परिवार को जारी होना है यानी कुल आवंटन 2487828 टन होना चाहिये परन्तु वास्तविकता यह है कि मध्यप्रदेश को भारत सरकार केवल 25.43 लाख गरीब परिवारों के मान से ही राशन जारी कर रही है इसके मायने यह हैं कि 60 फीसदी हितग्रहियों के लिये तो राशन ही आवंटित नहीं हो रहा है और जो आवंटित हो रहा है उसमें से 50 से 75 फीसदी का भ्रष्टाचार हो रहा है।

मई, 2006 में ही शोध संस्था ओआरजी – मार्ग ने अपनी रिपोर्ट में भी यही कहा है कि प्रदेश में गरीबी की रेखा के कार्ड तो 48.74 लाख हैं परन्तु राशन जारी होता है 27.97 लाख कार्ड धारकों के लिये। इस अध्ययन से योजना आयोग ने यह सिद्ध करने की कोशिश की है कि प्रदेश में बाकी के गरीब बोगस हैं और उन्हें लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली की जरूरत नहीं है। उल्लेखनीय है कि पहले भी समय–समय पर विश्वबैंक अपने अध्ययनों से यह सिद्ध करने की कोशिश करता रहा है कि अब सार्वजनिक वितरण प्रणाली चलाते रहना उपयोगी और फायदेमंद नहीं है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली की जमीनी स्थिति हेतु किया गया यह अध्ययन 6 जिलों के 8 विकासखंड़ों के 84 गांवों में किया गया। अध्ययन के दौरान सामान्य जानकारियों के लिये समूह चर्चा की गई, जबकि विस्तृत व विश्लेषणात्मक अध्ययन के लिये सर्वेक्षण पद्धति को अपनाया गया। सर्वेक्षण पद्धति के लिये हमने 5 जिलों के 1554 जनों का सर्वेक्षण किया। साथ ही यात्रा के दौरान कार्यकर्ता 7200 परिवारों के लोगों से मिले।

राशन व्यवस्था के सदर्भ में माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट निर्देश दिये हैं कि

- प्रत्येक राशन की दुकान माह में 26 दिन खुली रहें।
- प्रत्येक व्यक्ति को अपने हिस्से का राशन किश्तों में दी जाने की पूरी छूट मिले ।
- प्रत्येक राशन दुकान के सामने बोर्ड स्पष्ट रुप से लगा होना चाहिये और जिस पर यह स्पष्ट रूप से लिखा हो कि इस माह में कितनी सामग्री आई है और कितना वितरण किया जा चुका है।
- विकलांगों, निराश्रित वृद्धजनों, विधवाओं, गर्भवती महिलाओं, धात्री माताओं को भी अन्त्योदय अन्न योजना का हितग्राही माना जाये।
- प्रत्येक व्यक्ति के पास राशन कार्ड हो और उसे उसके हिस्से का पूरा राशन मिले।
- अन्त्योदय अन्न योजना के हितग्राही को उसकी स्थानीय आवश्यकता के अनुसार अनाज मिलने की छूट हो अर्थात् यदि वह 35 किलो खद्यान्न में से 20 किलो चावल तथा 15 किलो गेहूँ खरीदना चाहता है तो उसे वैसा ही दिया जाये।

इन आदेशों के संदर्भ में जब 'भोजन का अधिकार अभियान' ने 6 जिलों के 8 ब्लॉक में सर्वेक्षण किया तो हमने पाया कि सभी ओर माननीय उच्चतम न्यायालय के आदेशों का स्पष्ट रूप से उल्लंघन हो रहा है और लोगों के राशन से खिलवाड़ किया जा रहा है। हम जिलेवार स्थितियों पर बात करेंगे।

सर्वेक्षण से उभरा कि

जिला –टीकमगढ (निवाडी ब्लॉक)

- निवाड़ी ब्लॉक के 10 गांवों में से 560 परिवारों के पास कोई भी राशन कार्ड नहीं, हैं और जिनमें से अधिकांश गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले परिवार हैं।
- बीपीएल परिवारों को 35 किलोग्राम की अपेक्षा केवल 19 किलोग्राम खाद्यान्न का वितरण ही किया जा रहा हैं ।
- 100 प्रतिशत दुकानें न तो पूरे दिन (2–4 दिन) हीं खुलती है और न ही वहां से किश्तों में राशन ही मिलता है।
- किसी भी राशन दुकान पर कोई भी बोर्ड नहीं हैं ।
- कार्डों पर गलत इंट्री हर जगह होती है।
- खाद्यान्न की खराब गुणवत्ता (लाल गेहूँ) की बात हर जगह से सामने आ रही है ।

जिला – छतरपुर (लौडी व छतरपुर ब्लॉक)

- छतरपुर ब्लॉक के 10 गांवों में से 414 परिवारों के पास कोई भी राशन कार्ड नहीं, हैं और जिनमें से अधिकांश गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले परिवार हैं। ग्रम धामची और धनौरा में 150–150 परिवारों के पास राशनकार्ड नहीं हैं।
- लौडी ब्लॉक के 10 गांवों में 76 परिवार ऐसे सामने आये हैं जिनके पास राशन काड्र नहीं हैं। ग्रम बाजौरा में एक भी राशन कार्उ नहीं हैं।
- बीपीएल परिवारों को 35 किलोग्राम की अपेक्षा केवल 20 किलोग्रम खाद्यान्न का वितरण ही किया जा रहा हैं ।
- 100 प्रतिशत दुकानें (4–6 दिन) न तो पूरे दिन ही खुलती है और न ही वहां से किश्तों में राशन ही मिलता है।
- किसी भी राशन दुकान पर कोई भी बोर्ड नहीं हैं ।
- कार्डों पर गलत इंट्री हर जगह होती है।
- खाद्यान्न की खराब गुणवत्ता (लाल गेहूँ) की बात हर जगह से सामने आ रही है।

जिला – पन्ना (पन्ना ब्लॉक)

- पन्ना ब्लॉक के 12 गांवों में से 530 परिवारों के पास कोई भी राशन कार्ड नहीं, हैं और जिनमें से अधिकांश गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले परिवार हैं। ग्राम पटी में ही 190 परिवारों के पास कोई भी राशनकार्ड नहीं है।
- बीपीएल परिवारों को 35 किलोग्राम की अपेक्षा केवल 23 किलोग्रम खाद्यान्न का वितरण ही किया जा रहा हैं ।
- 100 प्रतिशत दुकानें न तो पूरे दिन (2–3 दिन) ही खुलती है और न ही वहां से किश्तों में राशन ही मिलता है। किसी भी राशन दुकान पर कोई भी बोर्ड नहीं हैं ।
- कार्डों पर गलत इंट्री हर जगह होती है।
- खाद्यान्न की खराब गुणवत्ता (लाल गेहूँ) की बात हर जगह से सामने आ रही हैं ।

जिला – भिण्ड (अटेर ब्लॉक)

- अटेर ब्लॉक के 10 गांवों में से 450 परिवारों के पास कोई भी राशन कार्ड नहीं, हैं और जिनमें से अधिकांश गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले परिवार हैं।
- बीपीएल परिवारों को 35 किलोग्राम की अपेक्षा केवल 10 से 15 किलोग्रम खाद्यान्न का वितरण ही किया जा रहा हैं ।
- 100 प्रतिशत दुकानें न तो पूरे दिन (1–3 दिन) नहीं खुलती है और न ही वहां से किश्तों में राशन ही मिलता है।
- किसी भी राशन दुकान पर कोई भी बोर्ड नहीं हैं ।
- कार्डों पर गलत इंट्री हर जगह होती है।
- खाद्यान्न की खराब गुणवत्ता (लाल गेहूँ) की बात हर जगह से सामने आ रही हैं ।

जिला – रीवा (सिमरिया ब्लॉक)

सिमरिया के एकमात्र गांव हरदुआ में तो 300 परिवारों के पास कोई भी राशन कार्ड नहीं है और ज्ञात हो कि ये सभी परिवार भूमिहीन हैं और गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन की पात्रता रखते हैं जबकि इनके नाम गरीबी रेखा में नहीं हैं। करते हैं । यहां पर भी गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों को 15 किलोग्रम खाद्यान्न ही वितरित किया जाता है।

✍ भोजन का अधिकार अभियान सहयोगी समूह, मध्यप्रदेश

उच्चतम न्यायालय का
सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर 10 जनवरी 2008 का आदेश

पीयूसीएल बनाम भारत संघ व अन्य – रिट याचिका क्र. 196/2001

सभी राज्यों के साथ मध्यप्रदेश से भी लगातार बनाये जा रहे दवाब के बाद माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने नये अंतरिम आदेश में कहा है कि सभी राज्यों को निर्देश दिया जाता है कि वे गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों को प्रति माह प्रति परिवार 35 किलो खाद्याान्न का वितरण आरम्भ कर दें। इस आदेश के न होने से यह खामियाजा गरीब परिवारों को भुगतना पड़ रहा था, क्योंकि मध्यप्रदेश सरकार ने यह कोटा काटते-काटते कई जिलों में 10 किलो तक कर दिया था। अब इस आदेश के बाद राज्य सरकारों को अनिवार्य रुप से गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों को प्रति परिवार 35 किलो खाद्यान्न उपलब्ध कराना अनिवार्य होगा। इससे पहले 28 नवंबर 2001 के आदेश में माननीय उच्चतम न्यायालय ने बीपीएल परिवारों को 25 किलो राशन देने संबंधी आदेश दिया था।

म.प्र. में गरीबी रेखा वालों को अब 3 रुपये किलो गेहूं तथा 4.50 रुपये किलो चावल

गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले जनों के लिये मध्यप्रदेश सरकार 1 अप्रैल से अधिक रियायती दर पर खाद्यान्न वितरण करने के क्रांतिकारी निर्णय के अंतर्गत ***हर परिवार को*** गेहूँ 3 रुपये प्रति किलो तथा चावल 4.50 रुपये प्रति किलो की दर से मिलेगा। इसके लिये 160 करोड़ रुपये का प्रावधान है। यह प्रावधान 1 अप्रैल 2008 से लागू किया जायेगा। मध्यप्रदेश सरकार ने इसे अन्नपूर्णा योजना का नाम दिया जाता है।

अपराध सरकारों के, माफी किसानों को

29 फरवरी को जब भारत के वित्तमंत्री देश का बजट संसद में पेश करने की तैयारी कर रहे थे तब चर्चाओं के हर मंच पर यह संभावना व्यक्त की जा रही है कि बजट में कर्ज से ग्रस्त किसानों को कर्ज माफी का राजनीतिक तोहफा दिया जा सकता है। ऐसा होगा या नहीं यह स्पष्ट नहीं था पर संभावनाओं की अभिव्यक्ति मात्र से बाजार के बैलों का मैदान (शेयर बाजार) में 100 अंकों की गिरावट आ गई यानी शेयर बाजार की मंशा के विपरीत है यह सब कुछ।

इसी दौरान व्यापारिक संगठनों और औद्योगिक विकास के विशेषज्ञों ने यह सवाल भी दाग दिया कि किसानों को दिये जाने वाले इस तोहफे की कीमत कौन वहन करेगा? उनका मानना था कि इस रियायत के एवज में उद्योगों रियायत कम होगी। वे केवल फायदा देख रहे थे कि उन्हें इस तथ्य से कोई सरोकार नहीं था कि 1993 से फरवरी 2008 की पंद्रह वर्षीय अवधि में 1.60 लाख किसान आत्महत्या कर चुके हैं, 48 प्रतिशत किसान कर्ज के बोझ तले दबे हुये हैं, हर किसान पर औसत 20 हजार रुपये का कर्ज है और 42 प्रतिशत किसान कोई भी छोटा–मोटा विकल्प मिलने पर कृषि के काम की आहूति दे देना चाहते हैं।

अंततः वित्तमंत्री ने संभावनाओं पर से पर्दा हटाया और अपने राजनैतिक बजट में अंततः यह घोषणा की कि एक हैक्टेयर से कम भूमिधारी सीमांत किसानों और एक हैक्टेयर से दो हैक्टेयर की भूमि वाले देश के हर किसान के कर्ज 30 जून 2008 के पहले समाप्त कर दिये जायेंगे। इससे थोड़े बहुत नहीं बल्कि 3 करोड़ किसानों को पचास हजार करोड़ रुपये की राहत मिलेगी। इतना ही नहीं एक करोड़ अन्य बड़े किसानों द्वारा एकमुश्त ऋण समायोजन करने पर 25 प्रतिशत रियायत दी जायेगी, इस पर 10 हजार करोड़ रुपये का व्यय सरकार करेगी। ऐसा भी नहीं है कि बैंको पर इस घोषणा का बहुत भार पड़ेगा। 60 हजार करोड़ रुपये की यह धन राशि बैंको द्वारा दिये गये कुल कर्ज का 4 प्रतिशत मात्र है और इससे ढाई गुना ज्यादा राशि तो बड़े–बड़े व्यापारिक और आद्यौगिक घरानों ने गटक ली और डकार भी नहीं ली। डेढ़ लाख करोड़ रुपये की नान परफार्मिंग असेट्स की वसूली पर सरकार मौन रहती है और बाजार की ताकतें भी।

ये वे संस्थान हैं जिन्होने चुकानों में सक्षम होने के बावजूद राष्ट्रीय पूंजी का गबन किया है और उनकी मंशा पर सवालिया निशान भी है परन्तु वे ही गबनकर्ता आत्महत्या करते, गरीब, भुखमरी और अपमान के शिकार किसानों को रियायत दिये जाने पर विशेषज्ञ यह प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं कि इसके बजाये बीज, खाद, सिंचाई और सस्ते ऋण की नीति पर ध्यान दिया जाना चाहिए क्योंकि सवाल स्थाई विकास का है। मुद्दा स्पष्ट है कि उच्च और ताकतवर वर्ग जीवन को भोगने के लिए हैं परन्तु छोटे किसान और मजदूर विकास की परिभाषा का आदर्श बनने के लिए मजबूर किए जाते हैं। सरकार के इस कदम के बारे में सबसे पहले यह मान्यता बनानी होगी कि यह कोई ''माफी'' नहीं है। कर्ज लेकर किसानों ने कोई अपराध नहीं किया था बल्कि सरकार स्वयं किसान विरोधी नीतियां बनाने और उनके क्रियान्वयन की अपराधी है। यह एक तरह से प्रायश्चित की दिशा में पहला कदम है। इस कदम से उन 57 प्रतिशत किसानों को फायदा होगा, जिन्होंने बैंक, सहकारी बैंक और ग्रामीण बैंकों से कर्ज लिया है, अब भी 43 प्रतिशत किसान इस राहत से वंचित रह गये हैं। दो हेक्टेयर की भूमि वाले किसानों पर 13762 रुपये का कर्ज है। मध्यप्रदेश के कुल कर्जदार किसानों में से 23 फीसदी ऐसे हैं, जिनके पास 2 से 4 हेक्टेयर भूमि हैं। 4 हेक्टेयर तक के किसानों पर 23456 रुपये कर्ज है।

सपनों और सेवाओं का व्यापार करके अर्थिक लाभ को मोक्ष तुल्य लक्ष्य मानने वाले निजी क्षेत्र की यह मान्यता है किसानों और कृषि क्षेत्र में जाने वाली रियायत सबसे अप्रिय कदम है, जो सरकार उठाती है। परन्तु वे भूल जाते हैं कि 1991 में उदारीकरण की नीतियां लागू होने के बाद भारत की तमाम सरकारों ने कृषि क्षेत्र के हकों को छीनकर बाजारवादी विकास को गति दी और इसी का परिणाम है कि डेढ़ लाख से ज्यादा किसानों को आत्महत्या करना पड़ी। और अनाज उगाने वाला किसान भुखमरी की कगार पर पहुंच गया। किसान को इस स्थिति में लाने

का जतन शेयर बाजार की सूचीबद्ध कम्पनियों ने कम और सरकार ने ज्यादा किया है। हर तरह की रियायत, वह चाहे बिजली की हो, पानी की हो, करों की हो या फिर अधोसंरचनात्मक ढांचे की, उद्योग और सेवा क्षेत्र को दी गई। उद्योगों के विकास की जरूरत को नकारा नहीं जा सकता है किन्तु यह विकास किस कीमत पर हो, यह विश्लेषण बेहद जरूरी है। कृषि क्षेत्र अपने आप कमजोर नहीं हुआ है बल्कि इसे कमजोर किया गया है ताकि छोटे और सीमांत किसान सस्ते श्रम के बाजार में नीलामी के लिये उपलब्ध हो और उनके अधिकार क्षेत्र से जमीनों को कानूनन छीना जा सके। यह स्पष्ट रूप से नजर आ रहा है कि विशेष आर्थिक प्रक्षेत्र नामक कार्यक्रम अपने आप में जमीन और संसाधनों की लूट का जरिया बनाकर सामने लाया गया। किसानों की ऋण माफी के लिए खर्च होने वाली राशि से निजी और औद्योगिक क्षेत्र या अर्थशास्त्री चिंतित नहीं थे बल्कि वे चिंतित इस बात से थे कि सरकार के इस कदम से यह साबित हो जायेगा कि 17 सालों से चली आ रही उदारीकरण की आर्थिक नीतियों ने ही किसानों की यह दुर्दशा की है; जबकि इस तर्क को आधुनिक विकासवादी नकारते रहे हैं।

किसानों को रियायत मिली, उनके पक्ष पर यह एक अच्छा और तात्कालिक राहत देने वाला कदम है परन्तु सवाल यह है कि जिन नीतियों के कारण किसान इस स्थिति में आये उन नीतियों को बदलने के कौन से कदम सरकार उठा रही है; निःसंदेह बजट में सरकार ने ऐसे कोई खास संकेत नहीं दिये। अब भय यह भी है कि क्या यही किसान कुछ सालों बाद फिर वैसी ही स्थिति में नहीं आ जायेंगे!! विश्व व्यापार संगठन की नीतियों का समर्थन करते हुये भारत भी 14 सौ से ज्यादा उपभोक्ता सामग्रियों के आयात में रियायत देता है। जब अमेरिका से आने वाला कपास सस्ता होगा तो भारत के कपास उगाने वाले किसान को कौन पूछेगा? अमेरिका अपने कपास उत्पादकों को जबरदस्त रियायत देता है और यहां तक कि बिना उत्पादन के अमेरिकी किसान फायदे में रहते हैं परन्तु भारत में कृषि सब्सिडी लगातार घटाई गई है। ऐसे में 20 लाख से ज्यादा कपास उत्पादक किसान धोखाधडी के शिकार होते हैं क्योंकि उनकी अपनी सरकार उन्हें संरक्षण प्रदान नहीं करती है। अब भी तकलीफ की बात यह है कि सरकार ने केवल बैंकों द्वारा दिये गये कर्जों की माफी की घोषणा की है जबकि वास्तव में किसानों पर साहूकारों और निजी कर्जदाताओं का भी भारी कर्ज है। उम्मीद थी कि साहूकारी अधिनियम और अन्य बजट प्रावधानों के जरिये उस कर्ज की भी समाप्त किये जाने की पहल होती क्योंकि वह राशि सरकारी कर्ज से दो गुना से ज्यादा है। उम्मीद थी कि कृषि ऋण की ब्याज दर 7 प्रतिशत से घटा कर 4 प्रतिशत कर दी जायेगी पर ऐसा नही हुआ।

यह भी तय है कि किसानों की ऋण माफी के कदम को विकास के कदम के साथ जोड़कर नहीं देखा गया है। सरकार ने 2.80 लाख करोड़ रुपये का प्रावधान कृषि ऋण के लिये किया है किन्तु बाजार में किसान को उसकी फसल का लाभप्रद दाम मिले इसका प्रावधान नहीं है न ही कहीं भी यह घोषणा की गई है कि भारत के किसानों को आत्महत्या करने के लिये मजूबर करने वाले कृषि उत्पाद के आयात को नियंत्रित किया जायेगा। उल्लेखनीय है कि मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ में 40 लाख छोटे और–सीमांत किसान हैं जिनके पास औसतन 0.91 हैक्टेयर भूमि है और केवल 26 प्रतिशत ही कृषि योग्य है। भारत के आर्थिक सर्वेक्षण में माना गया है कि सकल घरेलू उत्पाद में कृषि की भागीदारी 1982–83 में 36.4 प्रतिशत थी जो वर्ष 2006–07 में घरकर 18.5 प्रतिशत रह गई है। इसके बावजूद कृषि ने आधी अरब से अधिक आबादी को निरन्तर सहायता प्रदान की है और कार्यबल के 52 प्रतिशत को रोजगार मुहैया कराया है। परन्तु कृषि उत्पादन की बढ़ोत्तरी दर वर्ष 1990–2007 के दौरान 1.2 प्रतिशत गिर गई जो जनसंख्या के औसतन 1.9 प्रतिशत की वार्षिक बढ़ोत्तरी दर की तुलना में कम है। अब जनसंख्या ज्यादा बढ़ रही है पर उत्पादन कम बढ़ रहा हैं अनाजों की खपत 1990–91 में प्रतिदिन 468 ग्राम से घटकर वर्ष 2005–06 में 412 ग्राम प्रतिव्यक्ति हो गई है। जिस दौर में उत्पादन कम हो रहा है उसी दौर में वित्तमंत्री विकास दर तेज होने का दावा कर रहे हैं यानी कृषि की कीमत पर देश का विकास हो रहा है। कुपोषण बढ़ा, खून की कमी के शिकार बढ़े, खाद्यान्न उपलब्धता कम हुई, किसानों ने आत्महत्यायें की पर देश विकसित हुआ, यह कैसा विकास ?

✍ **सचिन जैन**

किसानों के कर्ज से संबंधित आंकड़े

भारत के संदर्भ में	संख्या
देश में कुल परिवार	147898800
देश में कुल कृषक परिवार	89350400
देश में कुल ऋणग्रस्त परिवार	43424200
देश में कुल कृषक परिवार (प्रतिशत में)	48.6
मध्यप्रदेश के संदर्भ में	**संख्या**
मध्यप्रदेश में कुल परिवार	9389800
मध्यप्रदेश में कुल किसान परिवार	6320600
मध्यप्रदेश में एक किसान पर औसत ऋण राशि	14218 रुपये
मध्यप्रदेश में कर्जे से ग्रस्त कुल किसान परिवार	3211000
मध्यप्रदेश में कर्जे से ग्रस्त कुल किसान परिवार (प्रतिशत में)	50.80 प्रतिशत
राज्य में कुल छोटे और सीमांत किसान (2 हेक्टेयर तक)	3775934
राज्य में कुल जोतों की संख्या	73.60 लाख
मध्यप्रदेश में आदिवासी कृषक	21.1 प्रतिशत
मध्यप्रदेश में दलित कृषक	21.1 प्रतिशत
अन्य पिछड़ा वर्ग कृषक	21.1 प्रतिशत
अन्य	19.4 प्रतिशत
मध्यप्रदेश में सभी किसानों की कुल ऋण राशि	**8986 करोड़ रुपये**
मध्यप्रदेश में छोटे और सीमांत किसानों की कुल ऋण राशि	**4029.54 करोड़ रुपये**
मध्यप्रदेश में छोटे और सीमांत किसानों पर संस्थागत ऋण	**2337 करोड़ रुपये**

मध्यप्रदेश में ऋणग्रस्तता किसान (कुल किसानी कर्ज में से)	
सामाजिक वर्ग	प्रतिशत
आदिवासी	15.9 प्रतिशत
दलित	18.6 प्रतिशत
अन्य पिछड़ा	47.8 प्रतिशत
आय वर्ग	17.6 प्रतिशत

मध्यप्रदेश में छोटी और सीमांत भूमिधारित		
भूमि आकार	संख्या (लाख)	भारत
राज्य में सीमांत भूमि धारित (जोतें)	28.38 लाख	38.56 प्रतिशत
राज्य में छोटे भूधारिता (जोतें)	19.51 लाख	26.51 प्रतिशत
अन्य (जोतें)	25.71 लाख	34.93 प्रतिशत
कुल (जातें)	73.60 लाख	100 प्रतिशत

संदर्भ : ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007–12) का दस्तावेज

भू–स्वामित्व (मध्यप्रदेश एवं भारत)		
भूमि आकार	मध्यप्रदेश	भारत
0.01 हेक्टेयर	0.04 प्रतिशत (2530 परिवार)	0.013 प्रतिशत
0.01 से 0.40 हेक्टेयर	8.00 प्रतिशत (505648 परिवार)	29.9 प्रतिशत
0.41 से 1.00 हेक्टेयर	24.6 प्रतिशत (1554866 परिवार)	29.8 प्रतिशत
1.01 से 2.00 हेक्टेयर	27.1 प्रतिशत (1712890 परिवार)	18.9 प्रतिशत
2.01 से 4.00 हेक्टेयर	23.1 प्रतिशत (146005 परिवार)	12.5 प्रतिशत
4.01 से 10.00 हेक्टेयर	13.0 प्रतिशत (821678 परिवार)	6.4 प्रतिशत

10.00 हेक्टेयर से ज्यादा	0.39 प्रतिशत (24650 परिवार)	0.12 प्रतिशत

मध्यप्रदेश में कुल ऋण राशि		
भूमि आकार	मध्यप्रदेश	ऋण राशि
0.01 हेक्टेयर	0.04 प्रतिशत (2530)	1.54 करोड़ रुपये
0.01 से 0.40 हेक्टेयर	8.00 प्रतिशत (505648)	331 करोड़ रुपये
0.41 से 1.00 हेक्टेयर	24.6 प्रतिशत (1554866)	1340 करोड़ रुपये
1.01 से 2.00 हेक्टेयर	27.1 प्रतिशत (1712890)	2357 करोड़ रुपये
कुल राशि		**4029.54 करोड़ रुपये**
संस्थागत ऋण (कुल ऋण का 58 प्रतिशत)		2337 करोड़ रुपये

किसानों के वर्तमान कर्ज का कारण और उपयोग		
	मध्यप्रदेश	भारत
कृषि में पूंजीगत व्यय	47.2 प्रतिशत	30.6 प्रतिशत
कृषि में वास्तविक व्यय	21.3 प्रतिशत	27.8 प्रतिशत
गैर–कृषि व्यवसाय	0.14 प्रतिशत	6.7 प्रतिशत
उपभोग व्यय	9.6 प्रतिशत	8.8 प्रतिशत
विवाह/ सामाजिक व्यवहार	14.4 प्रतिशत	11.1 प्रतिशत
शिक्षा	0.01 प्रतिशत	0.08 प्रतिशत
स्वास्थ्य	3.6 प्रतिशत	3.3 प्रतिशत
अन्य व्यय	2.7 प्रतिशत	10.8 प्रतिशत

कर्ज के स्रोत		
	मध्यप्रदेश	भारत
सरकार	1.9 प्रतिशत	2.5 प्रतिशत
सहकारी समितियां	16.9 प्रतिशत	19.6 प्रतिशत
बैंक	38.1 प्रतिशत	35.6 प्रतिशत
व्यावसायिक साहूकार	22.6 प्रतिशत	25.7 प्रतिशत
व्यापारी	9.0 प्रतिशत	5.2 प्रतिशत
रिश्तेदार/ मित्र	10.1 प्रतिशत	8.5 प्रतिशत
डॉक्टर/ वकील	0.05 प्रतिशत	0.09 प्रतिशत
अन्य	0.08 प्रतिशत	2.1 प्रतिशत

किसानों पर कितना कर्ज		
भूमि का आकार	भारत (कर्ज की राशि)	मध्यप्रदेश
0.01 हेक्टेयर से कम	6121 रुपये	5100 रुपये
0.01 से 0.4 हेक्टर	6545 रुपये	3335 रुपये
0.41 से 1.00 हेक्टेयर	8623 रुपये	7323 रुपये
1.01 से 2.00 हेक्टेयर	13762 रुपये	12467 रुपये
2.01 से 4.00 हेक्टेयर	23456 रुपये	19256 रुपये
4.01 से 10.00 हेक्टेयर	42532 रुपये	29642 रुपये
10. हेक्टेयर से ज्यादा	76232 रुपये	61800 रुपये

विभिन्न सामाजिक वर्गों के किसानों पर कर्ज की औसत राशि		
वर्ग	मध्यप्रदेश	भारत
आदिवासी	4812 रुपये	5506 रुपये
दलित	8910 रुपये	7167 रुपये
अन्य पिछड़ा वर्ग	15628 रुपये	13489 रुपये

अन्य वर्ग	25411 रुपये	18118 रुपये
कुल कर्ज	14218 रुपये	12585 रुपये
प्रतिव्यक्ति उपभोक्ता व्यय (मासिक) और कर्ज की राशि (किसानों में)		
प्रति व्यक्ति मासिक व्यय	मध्यप्रदेश में किसानों पर कर्ज	भारत में किसानों पर कर्ज
000 से 225 रुपये	6305 रुपये	4446 रुपये
225 से 255 रुपये	9437 रुपये	6127 रुपये
255 से 300 रुपये	15322 रुपये	8591 रुपये
300 से 340 रुपये	14434 रुपये	8544 रुपये
340 से 380 रुपये	16067 रुपये	9100 रुपये
380 से 420 रुपये	9479 रुपये	9510 रुपये
420 से 470 रुपये	20889 रुपये	12873 रुपये
470 से 525 रुपये	17313 रुपये	15178 रुपये
525 से 615 रुपये	24338 रुपये	16529 रुपये
615 से 775 रुपये	22311 रुपये	20537 रुपये
755 से 950 रुपये	26690 रुपये	27630 रुपये
950 रुपये से ज्यादा	52418 रुपये	39058 रुपये
सभी वर्गों में	**14218 रुपये**	**12585 रुपये**
स्त्रोत :– किसानों के कर्ज की स्थिति : नेशनल सेम्पल सर्वे आर्गनाईजेशन, 59 वां चक्र		

कहीं गड्ढे तक ही सीमित होकर नहीं रह जायें कपिल धारा के कुएं

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी कानून के तहत बड़ी तेजी से काम शुरू हुआ है यदि पूरी समझ और ईमानदारी से काम किया जाये तो गाँव की तस्वीर बदल सकती है। इस समय सतना जिले के रामपुर क्षेत्र में, रोजगार गारण्टी के तहत बड़ी संख्या में कुयें खुदवाये जा रहे हैं। एक लाख इकतालीस हजार प्रति कुएँ के बजट से बनाये जा रहे कुओं से, एक ओर जहाँ गरीब किसान लभान्वित हो रहे है।, वहीं मजदूरों को भी गाँव में काम मिल रहा है, मजदूरों के पलायन में कमी आई ह और कुआँ के रूप में गाँव में एक उत्पादक और स्थायी परिसम्पत्ति की रचना भी हो रही है। एक तरह से कपिलधारा के ग्रामीण विकास परियोजना रोजगार गारण्टी की मूल भावना से काफी मेल खा रही है। क्षेत्रीय परिस्थिति, कानून की मंशा और लोगों की जरूरत के अनुसार, गाँव में कपिलधारा सहित रोजगार गारण्टी का प्रस्ताव अगहन वाली नवम्बर में हो जाना चाहिए और कम से कम दिसम्बर के अंतिम सप्ताह तक काम शुरू हो जाना चाहिए। और वह काम माघ–फाल्गुन यानी फरवरी और ज्यादा से ज्यादा आधे मार्च तक समाप्त हो जाना चाहिए क्योंकि इसी समय मजदूर खाली रहता है उसे काम की जरूरत होती है, तथा वास्तुशास्त्र के अनुसार इस समय पर किसी भी काम की सफलता की सम्भावनायें ज्यादा रहती हैं।
लेकिन ग्रामीण विकास की ये परियोजनायें, बनाने में न तो, परिस्थितियों की समझ, दिखती है और न ही पारदर्शिता, ईमानदारी और ग्रामसभा की सहभागिता, ही दिखाई देती है। नतीजा यह है कि लगभग दिसम्बर–जनवरी में ग्राम पंचायत से प्रस्ताव भेजे गये। ये प्रस्ताव कार्यक्रम अधिकारी (सी.ई.ओ.) के दिशानिर्देश पर भेजे गये। कुओं का काम शुरू हुआ और 26–30 दिन तक काम करने के बावजूद दो व्यक्तियों के बीच में सिर्फ 450 रुपये का भुगतान हो पाया है। अभी ये काम अधूरा है, इस बीच शादी–ब्याह में मजदूर फंसा रहेगा और यदि इसी बीच पानी गिर गया तो ये आधे खुदे कुएँ गिर जायेंगे तथा इनमें लगा श्रम और पैसा बेकार जायेगा। इसलिए लगता है कि कहीं गड्ढों तक ही तो सीमित हो कर नहीं रह जायेंगे, ये कपिलधारा के कुएँ। इस पर ध्यान देना होगा नहीं तो इसके लिये आखिर जिम्मेदार कौन होगा?

✍ **ध्रुव भाई, सीधी**

4. विस्थापन

विस्थापन और बच्चे

म.प्र. में ऐसी बड़ी आबादी है जो बड़ी विकास परियोजनाओं की वजह से विस्थापित है। इन परियोजनाओं में से सरदार सरोवर परियोजना सबसे ज्यादा विवाद में रही हैं। सरदार सरोवर परियोजना बांध नर्मदा नदी के ऊपर बना है। नर्मदा विकास घाटी प्राधिकरण के इस बांध से अभी तक अनुसार 40,000 लोग विस्थापित हुये। विस्थापन की वजह से सबसे ज्यादा महिला एवं बच्चों पर प्रभाव पड़ा है। सरदार सरोवर बांध, के ज्यादातर विस्थापित म.प्र. के झाबुआ, बड़वानी के आदिवासी जन हैं। कमोदी बाई झाबुआ जिले के अलीराजपुर तहसील की जलसिंधी गांव की निवासी है। कमोदी बाई के पास पहले 2 एकड़ जमीन हुआ करती थी। परंतु बांध में पानी भर जाने के कारण उनकी जमीन डूब गयी है। कामोदी बाई को सरकार की तरफ से न तो कोई मुआवजा मिला ओर न ही जमीन, कामोदी के 5 बच्चे हुए थे। जिसमें की 2 बच्चे पिछले 2 साल में खाद्य असुरक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव में चल बसे।

जलसिंधी गांव में 400 परिवार हैं, इन गांवों में ज्यादातर आदिवासी समुदाय के लोग रहते हैं। इन गांवों में 75 प्रतिशत परिवारों की जमीन डूब चुकी है। लोग अपना घर छोड़कर पहाड़ पर बस गये हैं। गांव चारों तरफ पानी से घिरा हुआ है। बच्चों के लिए न तो गांव में आंगनवाड़ी है और न ही स्वास्थ्य की सुविधाएं। आंगनवाड़ी में पोषण आहार 6 माह में एक बार आता है। वो भी नाव से। गांव में लोगों के पास आजीविका के कोई साधन नहीं हैं। जिसकी वजह से वो अपने और अपने बच्चों का पालन पोषण करने में असमर्थ हैं। गांव में 11वें बाल संजीवनी के आंकड़े के अनुसार 55 प्रतिशत बच्चे कुपोषित हैं। गांव में न तो डॉक्टर आता है और न ही कोई नर्स। बच्चों का एक भी बार टीकाकरण नहीं हुआ। जलसिंधी में पानी जमा होने की वजह से बच्चों को मलेरिया, डायरिया, इत्यादि बीमारी होती रहती हैं। खाद्य असुरक्षा की वजह से इन बच्चों की प्रतिरोधक क्षमता कम हो गयी है। अतएव डूब क्षेत्रों में बच्चों की स्थिति बदतर है।

✍ रोली शिवहरे

एक नजर, मेरे भी घर

(मद्रासी कॉलोनी, भोपाल के विस्थापन की कथा)

भोपाल शहर के बीचो–बीच एक बस्ती है मद्रासी कालोनी। कालोनी शब्द सुनकर जो चित्र हमारे दिमाग में उभरता है, उससे बिल्कुल विपरीत है यहां की बस्ती। यहां रहने वाली आबादी का 80 प्रतिशत हिस्सा पत्थर फोड़ने का काम करता है। ये वही लोग है। जिन्होंने हमारे प्रदेश का मंत्रालय बनाया, उसकी नींव खोदी। ये लोग यहां चालीस वर्षों से रह रहे हैं, पर अब नहीं रहेंगे क्योंकि यह बस्ती अस्थाई रूप से विस्थापित की गई है या यूं कहें कि जबरदस्ती खाली कराई गई है। जबरदस्ती शब्द यहां यूं ही नहीं लिखा गया है इसकी भी एक कहानी है।

मद्रासी कालोनी में रहने वाले लोग एक ही समुदाय से हैं इसलिए जब उन्हें पंचशील नगर के शेड़ों में बसाया जा रहा था तो वे नहीं गए ना ही जनता क्वार्टर में बसने के लिए गए। पर सरकार की मजबूरी है कि इनको वहाँ से हटाया जाये। ये लोग शहर की मेन रोड के किनारे पर आज कीमती हो गयी जमीनों पर बसे है। जहां से आने वाले समय में देशी–विदेशी निवेशक गुजरेंगे और अभी यहां से मुख्यमंत्री गुजरते हैं। अगर यहाँ ये झोपड़े दिखेंगे तो कैसे पता चलेगा कि प्रदेश की गरीबी कम हुई है। पहले प्रशासन ने रणनीति बनाकर मद्रासी कालोनी के

वासियों को अपने जाल में फंसा लिया। उन्हें बिल्डिंग का सपना दिखाया। स्थानीय नेताओं को सहमत करा लिया गया, ताकि कोई आवाज न उठा सके। महापौर को भी बस्ती में बुलाया ताकि छोटी–मोटी आशा जगा सके।

लोगों से कहा गया कि विस्थापित होते ही आपको अस्थायी आवास, पानी, शौचालय, नाली आदि की व्यवस्था हो जायेगी। पर जो हुआ वो इसके ठीक उलटा था। अभी तक यहाँ से 209 परिवारों को हटाया जा चुका है जबकि मकान बनने हैं केवल 180। जिन परिवारों को विस्थापित किया गया है उन्हें रविन्द्र महाविद्यालय के सामने पी. डब्ल्यू.डी. की बगिया में केवल जगह दिखाई गयी, जिसको जितनी घेरनी है घेर ले चाहे दूसरों को कम पड़ जाये। जगह भी ऐसी कि अभी से कीचड़ है तो कल्पना कीजिये कि बरसात में क्या होगा ? ऊपर से पास में टूटा हुआ नाला। इस विस्थापन से लोगों की अभी तक महीने भर की मजदूरी मारी जा चुकी है और कितने दिन की मारी जायेगी पता नहीं ? बच्चों ने स्कूल जाना छोड़ दिया है। महिलाओं को शौच के लिए जाते हुए भी डर लगता है। कड़ाके की ठंड में लोग खुले आसमान के नीचे पड़े हैं। अब हर वक्त सामान की रखवाली करनी पड़ती है। कमाई न होने से कई लोगों ने दो–तीन दिन से खना नहीं खाया है और कुछ लोग एक वक्त खाकर काम चला रहे हैं।

अब तक शासन की ओर से न तो कोई अधिकारी यहाँ आया है और ना ही किसी राजनीतिक दल ने इन लोगों से कोई मुलाकात की है। लोगों से सहमति पत्र भरवा लिया है जिसमें यह कहीं नहीं लिखा है कि इनको मद्रासी कालोनी में ही बसाया जायेगा या कहीं और। सहमति–पत्र देने वाले अधिकारी अब कहते हैं कि क्या हमसे पूछकर घर तोड़ा था। ठेकेदार की ओर से किसी–किसी को तीन बल्ली और दो बंस मिले है। जो लोगों को बाद में वापस करने हैं। गर ठेकेदार से लिए गए सामान को कुछ होता है तो उसकी कीमत चुकानी पड़ेगी। लेकिन लोगों के तोड़े गए घरों की कोई कीमत नहीं दी जाती। अब आप ही सोचिए कि जब प्रकृति आपदा लाती है तो देर–सबेर सरकार मदद करती है पर जब सरकार ही आपदा लायेगी तो कौन मदद करेगा ?

✍ **जयभीम, भोपाल**

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना

दिनांक 19 नवम्बर 2007 से राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना के रूप में जाना जायेगा (पत्र –106/75/08/26–2 दिनांक 25/1/08, मध्यप्रदेश शासन। इसके अन्तर्गत दिसंबर 2007 से –

- गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले 65 वर्ष एवं उससे अधिक आयु के **नये व्यक्ति** जिन्हें **नवम्बर 2007** से इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन की पात्रता है उन्हें **प्रतिमाह 200 रुपये** पेंशन प्रदान की जायेगी।
- 65 वर्ष एवं उससे अधिक के वे व्यक्ति/ हितग्राही जिन्हें **नवम्बर 2007 के पूर्व से ही** वृद्धावस्था पेंशन मिल रही है उन्हें **प्रतिमाह 275 रुपये** पेंशन प्रदान की जायेगी।

5. पंचायती राज और महिला

पंचायतीराज व्यवस्था ने दी महिलाओं को जुबान

डेढ़ दशक पहले तक यह कल्पना करना कठिन था कि गांव की अनपढ़, कम पढ़ी–लिखी, दलित और आदिवासी महिलाएं गांव–ज्वार का नेतृत्व करेंगी पर कल्पना उस वक्त साकार हो गया, जब संसद ने 22 दिसंबर,1992 को 73वें संविधान संशोधन अधिनियम पारित कर दिया। इस अधिनियम के तहत राज्यों को न केवल त्रिस्तरीय पंचायत राज व्यवस्था के लिए कानून एवं नियम बनाना बाध्यकारी हुआ, बल्कि इसके माध्यम से महिलाओं को स्थानीय निकायों में 33 फीसदी आरक्षण रखना भी अनिवार्य हुआ। बहुत खलबली हुई गांवों में। महिलाओं के नेतृत्व क्षमता पर प्रश्न खड़े किए गए और महिला सरपंच एवं पंच के काम करने में उनके पति या पुत्र आगे आए। महिला हिंसा में इजाफा हुआ। ऐसा साबित करने की कोशिश की गई, मानो महिलाओं को नेतृत्व का अधिकार देकर सरकार ने गलत काम किया है। पर तमाम बाधाओं के बावजूद पिछले 15 वर्षों में महिलाएं सशक्त होकर सामने आई हैं और तमाम बाधाओं का सामना करते हुए सामाजिक विकास के मुद्दों पर काम करते हुए गांव का बेहतर विकास कर रही हैं।

मध्यप्रदेश के रायगढ़ जिले में लखनीवाल गॉव की सरपंच भंवरीबाई के इसी तरह के प्रयासों को प्रभावशाली व्यक्तियों के द्वारा कुचल दिया गया लेकिन उसने भी अपनी लड़ाई से एक बारगी तो यह आभास करवा दिया था कि आजतक कमी थी तो बस अधिकारों की। भंवरीबाई के विपरीत इटारसी के सोनासांवरी गांव की सरपंच केसरबाई ने गांव में रह रहे गुंडों द्वारा महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों के खिलाफ जेहाद छेड़कर उन्हे जेल की हवा खिलवाई। उज्जैन की एक ग्राम पंचायत में सुगनाबाई पर तत्कालीन सरपंच ने बहुत जुल्म किए और उसके तीन बेटों की नृशंस हत्या भी कर दी। लेकिन सुगनाबाई डरी नहीं और उसने भी आगे चलकर पंचायत के चुनाव लड़े और उसी सरपंच को भारी मतों से हराया। आज वह स्वयं ट्रेक्टर खरीदकर अपनी खेती स्वयं देखती है।

दबंगता की एक और मिसाल खरगोन जिले की बालझिरी ग्राम पंचायत की आदिवासी सरपंच श्रीमती गीताबाई की थी। उसके विरूद्ध लाए गए अविश्वास प्रस्ताव को उच्च न्यायालय ने अवैध करार दिया। न्यायालय ने कहा, ''अविश्वास प्रस्ताव तभी पारित माना जाता है जब उसे कम से कम दो तिहाई सदस्यों का समर्थन प्राप्त हो।'' यह जीत गीताबाई के संघर्ष का ही परिणाम थी। सामाजिक विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली ने प्रदेश में तीन पंचायतों के प्रतिनिधियों को अध्ययन किया था। राजगढ़ जिले में सल्हौना गांव की सरपंच द्रौपदी देवी को देर रात तक चली बैठक में वहां के प्रखंड विकास अधिकारी के सामने निर्वस्त्र किया गया क्योंकि उसने अपना त्यागपत्र देने या अन्य सदस्यों का त्यागपत्र स्वीकार करने से इंकार कर दिया था। श्री पी. नाथ ने अपनी रिपोर्ट में सरपंच गुडिया बाई अहिरवार, सरपंच, पिपरा ग्राम पंचायत और बलदेव गढ़ ब्लाक के फुटेर ग्राम पंचायत की सरपंच कुमनी देवी अहिरवार की समस्याओं का अध्ययन किया था। गुडिया बाई का आजादी की 50 वीं वर्षगांठ के अवसर पर 15 अगस्त को स्थानीय स्कूल में झंडा फहराना, गांव वालों को अच्छा नहीं लगा। उसको बुरा–भला कहा गया। लेकिन अहिरवार ने प्रत्युत्तर में कहा कि सरपंच होने के नाते उसने अपना फर्ज निभाया। जब यह खबर समाचार–पत्र में आई तो राज्य के तत्कालीन मुख्यमंत्री ने घोषणा की कि अगले वर्ष टीकमगढ़ जिला मुख्यालय पर झंडा पिपरा गांव की सरपंच गुंडिया बाई फहरायेगी और उसने झंडा भी फहराया था। रायगढ़ मध्यप्रदेश के खजूरिया ग्राम पंचायत की सरजू बाई ने बाल विवाहों को बंद करवाने का बीड़ा उठाया और इसमें काफी हद तक उन्हे सफलता भी मिली।

कुछ राज्यों में निर्वाचित महिलाओं ने कम–वेतन तथा पीने के पानी के खिलाफ विरोध–प्रदर्शन में भाग लिया। सीहोर (म.प्र.) की अमलाहा ग्रामपंचायत की एकता जायसवाल ने तो सरपंच होने के मायने ही बदल दिए हैं। नयी दिल्ली स्थित इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेस ने उन्हें पहली विशिष्ट महिला सरपंच से सम्मानित किया था।

किसी दूसरे गांव से ब्याहकर आई एकता ने अपने ससुराल में आकर निर्भीक होकर पंचायत चुनाव लड़ा और सरपंच चुनी गई। पहले पहल तो किसी ने नहीं सोचा था कि चुपचाप सी रहने वाली एकता इतना कुछ कर लेगी कि देश भर में चर्चा का विषय बनेगी। खुद शिक्षित होने व शिक्षा के महत्व को जानते हुए एकता ने शिक्षा पर बहुत जोर दिया। बालिका शिक्षा उनकी पंचायत में लगभग न के बराबर थी, उसे उन्होंने स्वयं के विशेष प्रयासों से 75 प्रतिशत तक पहुंचा दिया। यहॉ तक कि कई बार एकता ने स्वयं स्कूल में पढ़ाया भी, क्योंकि स्कूलों में शिक्षकों की व्यवस्था नहीं हो पा रही थी। इसके अलावा उन्हौंने अपनी पंचायत को भी कम्प्यूटरीकृत कर दिया और इंटरनेट से भी जोड़ दिया है। कम्प्यूटर युग में उनके द्वारा उठाया गया यह कदम निश्चिय ही प्रेरणादायी था। एक महिला द्वारा इतने कार्यों से प्रभावित होकर गॉव की अन्य महिलाऍ भी अब आगे आने लगी हैं और अपनी समस्याऍ, सुझाव बेखौफ देने लगी थी। जो गांव एक समय प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधाओं के लिए तरसता था वहॉ अब एक उन्नत प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र था तथा जरूरत का सारा सामान वहॉ हमेशा उपलब्ध रहता था। एकता ने अपनी पंचायत में नशा विरोधी कार्यक्रम भी चलाया। यहॉ तक कि शराबी पुरुषों को उनकी पत्नियों के सामने माफी मंगवाने से भी वे नहीं चूकती थीं। सीहोर जिले के जमुनिया टैंक ग्राम पंचायत की दो बार से लगातार निर्वाचित सरपंच राधाबाई के अथक प्रयासों से ग्रामसभा की बैठकों में महिलाओं की उपस्थिति में इजाफा हुआ था और इसी वजह से पीने के पानी, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि जैसे मुद्दे अब बहुलता के साथ बैठकों में उठाए जा रहे थे।

एक महिला जिसने एम.एससी, एल.एल.बी करने के बाद शहर में तमाम आकर्षणों के बाद भी ग्रामीण अंचल में ही रहकर बतौर सरपंच अपनी सेवाऍ प्रदान कर रही है। नाम है, वैशाली परिहार, सरपंच बयावड़ा ग्राम पंचायत, जिला होशंगाबाद। अब उच्च शिक्षा का प्रभाव देखिए कि पंचायत के सारे विकास कार्य वैशाली ने संभाल रखे हैं। सरकारी तंत्र भी उन्हे भरपूर सहयोग करता है। कुसुम कुशवाहा महराउच ग्राम पंचायत, जिला सतना की सरपंच हैं और पारिवारिक तौर पर बेहद गरीब हैं। स्वयं आठवीं तक पढ़ी हैं और पहले चुनाव की हिचकिचाहट से बाहर निकल कर इस बार उन्हौने स्वयं के बलबूते पर कुछ करने की ठानी है। वे अपने गांव को शिक्षित करने का सपना संजोए हुए है और पंचायत के ही स्कूल में शिक्षकों की नियुक्ति पर जोर दे रही हैं। एक मुस्लिम दलित पंच है तस्लीम। उज्जैन के क्वाथा गांव में मैला ढ़ोने का कार्य करती थीं। संयोग से तस्लीम की मुलाकात एक गैर सरकारी संगठन 'गरीमा' के कार्यकर्ताओं से होती है और 1993 के कानून जिसमे अस्पृश्यता को दंडनीय अपराध माना गया है का पता उसे चलता है। परिवार और गॉव वालों के भारी विरोध के बावजूद तस्लीम ने मैला फेकने के कार्य के लिए मना कर दिया। स्वयं उदाहरण बनकर उसने आस–पास के कई गांवों में भी इसके लिए मुहिम चलाई और किसी हद तक सफल भी रही। धार जिले के चिकटाबढ़ गांव की ऐसी ही एक पंच हैं सावित्री और गांव की भाषा में बात की जावे तो उसने एक गुनाह किया। गुनाह भी यह कि सरपंच के खिलाफ कदम उठा दिए। उसने गांव की अन्य महिलाओं के साथ मिलकर सरपंच के भ्रष्टचार को जब बाहर लाई तो स्थितियां उनके विरूद्ध थी। शासन के हस्तक्षेप से जीत सावित्री की हुई और शेष बचे कार्यों को महिला मंडल द्वारा ही सम्पन्न किया गया जो तमाम व्यवस्थाओं पर करारे तमाचे की तरह था। मंड़ला जिले की बिछिया तहसील की खटिया पंचायत की महिला सरपंच सुखवती बाई दूसरी बार सरपंच चुनी गई हैं। पंचायती राज की तीन पारियों में से पहली और तीसरी पारी की वे साक्षी रही हैं और दोनों पारियों में अन्तर के बारे में पूछने पर सहर्ष कहती हैं, ''पहली बार तो ज्यादा कुछ नहीं समझ में आया था और ज्यादा कुछ करने को भी नहीं था, लेकिन अब अनुभव भी हो गया है और जनता के लिए करने को भी बहुत कुछ है।''

इसी क्रम में बालाघाट जिले की हट्टा ग्राम पंचायत में एक और गोंड़ आदिवासी नायिका ने तो पंचायती राज में एक अलग ही तरह से परचम फहरा रखा है। लगातार तीन पारियों से सरपंच बन रही भगलो बाई पुरूषों को हराकर अपने पद पर काबिज हुई हैं। सोनाबाई उइके जनपद सदस्य हैं मंडला जिले के मोगा ब्लॉक की, और गोंड़ आदिवासी हैं। वे कक्षा दसवीं तक पढ़ी हैं। मोबाइल हाथ में लिए वे बेरोकटोक 38 गांवों की जनपद में होने वाली सभाओं में भाग लेती हैं, महिला मंडल के गठन में सक्रिय भूमिका अदा करती हैं और शासन की विभिन्न योजनाओं के प्रति जागरूक रहते हुए कहती हैं, ''हम चाहते हैं कि हरेक को अपना हक मिले चाहे वह वृद्धावस्था पेंशन योजना हो, राष्ट्रीय परिवार सहायता योजना हो, सर्व शिक्षा अभियान हो या फिर बालिका शिक्षा के लिए कार्य हों....।

पंचायती राज के चलते ही छतरपुर जिले के भारतपुरा गांव की मीना बंसल, बेरखेड़ी बांव की जनक नंदिनी, मीरा दुबे, मंजु, सिंगरावनखुर्द की सियारानी, अहिल्याबाई, सागर जिले के खेरूआ की कमलारानी, सीधी जिले के बड़ोखर की उर्मिलाबाई ने गरीबी उन्मूलन परियोजनाओं के चलते विभिन्न विकास कार्यों को अंजाम दिया है और समाज की मुख्य धारा में स्वयं को स्थापित करने का कार्य किया है। अब उनकी पूछ.–परख भी समाज में बढ़ी है। छतरपुर जिले के सिंगरावनखुद एक समय पेयजल की समस्या से लड़ रहा था और कई बार पानी के लिए युद्ध जैसी स्थितियॉ निर्मित हो जाती थी लेकिन, यहॉ की महिलाओं ने नल–जल योजना के जरिए सभी मोहल्लों में शुद्ध पानी की कमी को पूरा किया हैं।
सतना जिले, रामपुर बघेलन तहसील के इटमा गांव की सरपंच श्रीमती कमला बाई की कहानी पूरे पंचायती राज की सटीक व्याख्या के लिए पर्याप्त है। वे एक ऐसा उदाहरण हैं जिसने पंचायती राज को खंगालने का मौका दिया है। 1994 के पहले चरण के चुनाव में जनपद सदस्य चुनी गई और शुरूवाती तमाम दबावों, झिझक के बावजूद अपना कार्यकाल चारों तरफ से सफलता अर्जित कर पूर्ण किया और लगभग एक करोड़ के विकास कार्य विशेष पहल के साथ करवाए। कमला बिल्कुल भी नहीं पढ़ी हैं और आदिवासी समुदाय से हैं।

निरक्षरता, गरीबी तथा अंधविश्वास के बंधनों को तोड़ना मुश्किल होते हुए भी अब जरूरी हो गया है। कम से कम प्रारंभिक चरण में ही सही, शक्तिशाली लोग अपने फायदे के लिए अनमने ढंग से ही सही, महिलाओं को चुनाव में खड़ा तो कर रहे है। आरक्षण की इस व्यवस्था से महिलाों की विभिन्न समस्याओं के निराकरण हेतु एक मौन–क्रांति के युग का प्रारंभ हो गया है, जिससे आने वाले वर्षो में 50 प्रतिशत आरक्षण के बाद और अधिक सकारात्मक परिणम निश्चय ही सामने आएंगे। आज भले ही पंचायतों में महिलाओं की स्थिति को लेकर प्रश्न उठाया जा रहा है, परंतु यह धारणा बिलकुल गलत है कि महिलाएं कोई जिम्मेदारी उठाने को तैयार नहीं है या उनमें निर्णय लेने की क्षमता नहीं है। वास्तविकता यह है कि अब तक महिलाओं को उनके अधिकारों से वंचित रखा गया था और सामाजिक–राजनीतिक क्षेत्र में बढ़ने के मार्ग में अड़चने पैदा करने का ही प्रयास किया गया।

✍ लोकेन्द्र सिंह कोट

6. कानूनी प्रक्रिया

वन अधिकार कानून का संक्षेप

आदिवासियों एवं अन्य जंगलवासियों को जंगल पर अधिकार देने के लिए देश में अनुसूचित जनजाति और अन्य परम्परागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) कानून लागू हो गया है। कानून लागू होने से पहले इसके लिए बन रहे नियमों पर कई सवाल खड़े किए गए थे पर अब लागू होने के बाद यह देखे जाने की जरूरत है कि इस कानून से देश के सबसे वंचित समुदाय को क्या हासिल हुआ है ?

सबसे पहले अधिकारों की बात की जाए, तो यह स्पष्ट होता है कि 13 दिसंबर, 2005 से पूर्व वन भूमि पर काबिज अनुसूचित जनजाति के सभी समुदायों को वनों में रहने और आजीविका का अधिकार मिलता है पर दूसरी ओर कानून की धारा 2 (ण) के अनुसार अन्य परंपरागत वन निवासी जो उक्त अवधि से पहले वन क्षेत्र में काबिज रहे हो, को तीन पीढ़ियों (एक पीढ़ी के लिए 25 साल) से वहां रहने का साक्ष्य प्रस्तुत करना होगा। इसका साक्ष्य प्रस्तुत करना इन समुदायों के लिए मुश्किल भरा होगा। साथ ही यदि झाबुआ में भील अनुसूचित जनजाति है, तो उसे 13 दिसंबर, 2005 से पूर्व वन भूमि पर काबिज होने की दशा में वन भूमि पर अधिकार मिलेगा, पर वही भील यदि दूसरे जिले में हो, जहां पर वह अनुसूचित नहीं हैं, तो उसे अन्य परंपरागत वन निवासी के रूप में दावा पेश करना पड़ेगा। कानून में धारा 2 (छ) ग्राम सभा की परिभाषा के तहत पारा, टोला और अन्य परंपरागत ग्राम सभाओं को मान्यता दी गयी है। पर नियम की धारा 3 (1) में इसे स्पष्ट नहीं किया गया है, इसमें कहा गया है कि ग्राम पंचायत द्वारा ग्राम सभाओं का संयोजन किया जाएगा। कानून की धारा 5 (1) में वन अधिकारों के धारकों के कर्तव्य बताए गए हैं, नियम की धारा 6 (1) में भी यही बात कही गई है पर कानून की धारा 3 (1) (झ) में धारकों को यह अधिकार दिए गए हैं कि उन्हें ऐसे किसी सामुदायिक वन संसाधन का संरक्षण, पुनर्जीवित या संरक्षित या प्रबंध करने का अधिकार है, जिसकी वे सतत् उपयोग के लिए परंपरागत रूप से संरक्षा और संरक्षण कर रहे हैं। नियमों में ठेकेदार, व्यापारी एवं भू–माफिया को जंगल अधिकारों से रोकने के लिए कोई प्रावधान नहीं रखा गया है।

आदिवासियों के लिए जाति प्रमाण–पत्र प्रस्तुत करने का प्रावधान है, तो अन्य जातियों के लिए ऐसे प्रावधान नहीं रखे गए हैं। नियमों के तहत वनों पर अधिकार के लिए वन अधिकार समिति द्वारा दावों का सत्यापन करने की प्रक्रिया अपनाई जाएगी। इसमें साक्ष्यों की प्रस्तुति के लिए जिस प्रक्रिया को अपनाने की बात की गई है, वह इतनी जटिल है कि उसके तहत कई जनजातीय समुदाय दावा करने से वंचित रह जाएंगे। अधिकांश वनवासी जनजाति के लिए दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करना दुरुह कार्य होगा। उल्लेखनीय है कि वन भूमि पर काबिजों के बारे में किसी भी प्रदेश सरकार के पास अभी तक कोई विश्वसनीय आंकड़ा भी उपलब्ध नहीं है। ऐसे में वन अधिकार समिति के पास जो दावे जाएंगे, उनकी संख्या सामान्य तौर पर ज्यादा दिखाई पड़ेगा, जिसे दस्तावेजों के अभाव में अंततः खारिज करने की कोशिश की जाएगी। अगस्त 2006 के वन विभाग के आंकड़ों को देखे, तो पता चलता है कि मध्यप्रदेश की वनभूमि पर 24 अक्टूबर 1980 के पूर्व के अतिक्रमण के संबंध में आए विवादों के निराकरण के लिए जिला स्तर पर गठित समिति के प्रतिवेदन में अपात्र घोषित करने के पीछे बताए कारणों में सबसे प्रमुख कारण वन भूमि पर काबिजों द्वारा दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर पाना है। इस पुराने मामले को देखकर ही यह आशंका होती है कि कितने वनवासियों के पास दस्तावेजी साक्ष्य होंगे और नहीं होने पर उनका क्या होगा?

यद्यपि कानून में एक महत्वपूर्ण प्रावधान यह है कि धारा 3 (2) के तहत वनग्रामों के विकास के लिए यानी विद्यालय, अस्पताल, आंगनबाड़ी, राशन दुकान, पेयजल, सड़क, सामुदायिक केंद्र आदि के लिए वन भूमि के परिवर्तन का उपबंध किया जाएगा, जिसके तहत प्रति हेक्टेयर 75 तक पेड़ों को गिराया जा सकता है। निश्चय ही इस प्रावधान से वन पर आश्रित समुदाय के विकास कें लिए नए रास्ते खुलेंगे।

✍ विकास संवाद समूह